पुस्तक की सामग्री

अंतर्राष्ट्रीय संबंधों की नींव

- अंतर्राष्ट्रीय संबंधों में राज्य का क्रम-विकास और प्रासंगिकता
- अंतर्राष्ट्रीय संबंधों में प्रमुख शब्दावली
- प्राचीन काल से यूरोप के उदय तक का अंतर्राष्ट्रीय ऐतिहासिक संदर्भ
- आधुनिक काल से शीत युद्ध की शुरुआत तक का अंतर्राष्ट्रीय इतिहास
- शीत युद्ध के दौरान अंतर्राष्ट्रीय इतिहास (1945-1991)

अंतर्राष्ट्रीय संबंधों के अध्ययन के दृष्टिकोण

- आईआर सिद्धांत की नींव
- आदर्शवाद
- यथार्थवाद
- नवयथार्थवाद (संरचनात्मक यथार्थवाद)
- नवउदारवाद (नवउदारवादी संस्थावाद)
- मार्क्सवाद
- सामाजिक रचनावाद
- क्रिटिकल इंटरनेशनल थ्योरी
- आईआर के लिए नारीवादी दृष्टिकोण
- आईआर में उत्तर-आधुनिकतावाद
- उदारवाद
- प्रकार्यवाद
- तुलनात्मक विश्लेषण और समकालीन प्रासंगिकता

अवधारणाएँ : राज्य राज्य प्रणाली और गैर-राज्य अभिनेता, शक्तियाँ, संप्रभुता, सुरक्षा; पारंपरिक और गैर-पारंपरिक।

- राज्य, राज्य प्रणाली, और गैर-राज्य अभिनेता
- शक्ति
- संप्रभुता
- सुरक्षा: पारंपरिक और गैर-पारंपरिक

संघर्ष और शांति : युद्ध की बदलती प्रकृति; सामूहिक विनाश के हथियार; निवारण; संघर्ष समाधान; संघर्ष परिवर्तन।

- युद्ध की बदलती प्रकृति
- सामूहिक विनाश के हथियार (WMD)
- निवारण
- संघर्ष समाधान
- संघर्ष परिवर्तन

भारतीय विदेश नीति का निर्माण और उद्भव

- प्राचीन काल में भारतीय विदेश नीति और रणनीतिक विचार
- भारतीय विदेश नीति: ब्रिटिश युग से नेहरूवादी काल तक
- भारतीय विदेश के निर्धारक और गठन

- भारतीय विदेश नीति: नेहरू से वर्तमान तक

भारत और सुरक्षा नीति, सांस्कृतिक कूटनीति, आर्थिक कूटनीति और परमाणु विदेश नीति

- भारत की राष्ट्रीय सुरक्षा नीति
- आतंकवाद पर भारत की विदेश नीति
- एयरोस्पेस और बाहरी अंतरिक्ष में भारतीय विदेश नीति
- भारत की विज्ञान और प्रौद्योगिकी कूटनीति
- भारत की समुद्री विदेश नीति रणनीति
- भारत की विदेश आर्थिक नीति (IFEP)
- भारत की ऊर्जा कूटनीति
- भारतीय डायस्पोरा: इतिहास, नीति, और वैश्विक उपस्थिति
- भारत की परमाणु विदेश नीति

संयुक्त राष्ट्र: उद्देश्य, लक्ष्य, संरचना और संयुक्त राष्ट्र के कामकाज का मूल्यांकन; शांति और विकास के दृष्टिकोण; मानवीय हस्तक्षेप; अंतर्राष्ट्रीय कानून; अंतर्राष्ट्रीय आपराधिक न्यायालय।

- संयुक्त राष्ट्र के उद्देश्य, लक्ष्य और संरचना
- संयुक्त राष्ट्र के कामकाज का मूल्यांकन और सुधार के प्रयास
- शांति और विकास के दृष्टिकोण
- मानवीय हस्तक्षेप और रक्षा करने की जिम्मेदारी (R2P)
- अंतर्राष्ट्रीय कानून
- अंतर्राष्ट्रीय व्यवस्थाओं में भारत की बातचीत की रणनीतियाँ
    - मुख्य पृष्ठभूमि: भारत की बातचीत की रणनीतियों की नींव
    - संयुक्त राष्ट्र (UN) में भारत
    - अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष (IMF) में भारत
    - जलवायु परिवर्तन पर अंतरसरकारी पैनल (IPCC) और जलवायु वार्ताओं में भारत
    - विश्व स्वास्थ्य संगठन (WHO) में भारत
    - संयुक्त राष्ट्र शैक्षिक, वैज्ञानिक और सांस्कृतिक संगठन (UNESCO) में भारत
    - संयुक्त राष्ट्र बाल कोष (UNICEF) में भारत
    - संयुक्त राष्ट्र शरणार्थी उच्चायुक्त (UNHCR) में भारत
    - संयुक्त राष्ट्र विकास कार्यक्रम (UNDP) में भारत
    - संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम (UNEP) में भारत
    - भारत और विश्व बैंक समूह

अन्य अंतर्राष्ट्रीय और क्षेत्रीय एजेंसियाँ या संगठन और मंच

- G-8 (आठ का समूह)
- G-77 (77 का समूह)
- G-20 (बीस का समूह)
- खाड़ी सहयोग परिषद (GCC)
- BRICS
- बिम्सटेक (बहु-क्षेत्रीय तकनीकी और आर्थिक सहयोग के लिए बंगाल की खाड़ी पहल)
- हिंद महासागर रिम एसोसिएशन (IORA)
- बहुपक्षीय निर्यात नियंत्रण व्यवस्था
- एशिया प्रशांत आर्थिक सहयोग (APEC)
- क्षेत्रीय व्यापक आर्थिक भागीदारी (RCEP)

- मेकांग-गंगा सहयोग (MGC)
- आसियान (दक्षिण पूर्व एशियाई राष्ट्र संघ)
- शंघाई सहयोग संगठन (SCO)
- दक्षिण एशियाई क्षेत्रीय सहयोग संगठन (SAARC)
- विश्व बैंक और आईएमएफ (अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष)
- अंतर्राष्ट्रीय आपराधिक न्यायालय (ICC)
- दक्षिणी अफ्रीकी विकास समुदाय
- यूरोपीय संघ
- अफ्रीकी संघ
- विश्व व्यापार संगठन
- गुटनिरपेक्ष आंदोलन

अंतर्राष्ट्रीय और क्षेत्रीय एजेंसियों या संगठनों के साथ भारत के संबंध

- भारत और G-8 (आठ का समूह)
- भारत और G-77 (77 का समूह)
- भारत और G-20 (बीस का समूह)
- भारत और खाड़ी सहयोग परिषद (GCC)
- भारत और BRICS (ब्राजील, रूस, भारत, चीन, दक्षिण अफ्रीका)
- भारत और बिम्सटेक (बहु-क्षेत्रीय तकनीकी और आर्थिक सहयोग के लिए बंगाल की खाड़ी पहल)
- भारत और हिंद महासागर रिम एसोसिएशन (IORA)
- भारत और बहुपक्षीय निर्यात नियंत्रण व्यवस्था
- भारत और एशिया प्रशांत आर्थिक सहयोग (APEC)
- भारत और क्षेत्रीय व्यापक आर्थिक भागीदारी (RCEP)
- भारत और मेकांग-गंगा सहयोग (MGC)
- भारत और आसियान (दक्षिण पूर्व एशियाई राष्ट्र संघ)
- भारत और शंघाई सहयोग संगठन (SCO)
- भारत और दक्षिण एशियाई क्षेत्रीय सहयोग संगठन (SAARC)
- भारत और विश्व बैंक और आईएमएफ (अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष)
- भारत और अंतर्राष्ट्रीय आपराधिक न्यायालय (ICC)
- भारत और दक्षिणी अफ्रीकी विकास समुदाय (SADC)
- भारत और यूरोपीय संघ
- भारत और अफ्रीकी संघ
- भारत और विश्व व्यापार संगठन
- भारत और गुटनिरपेक्ष आंदोलन

आईआर की राजनीतिक अर्थव्यवस्था; वैश्वीकरण; वैश्विक शासन और ब्रेटन वुड्स प्रणाली, उत्तर-दक्षिण संवाद

- मुख्य सैद्धांतिक दृष्टिकोण
- वैश्वीकरण
- वैश्विक शासन
- ब्रेटन वुड्स प्रणाली
- उत्तर-दक्षिण संवाद

समकालीन चुनौतियाँ

- समुद्री सुरक्षा
- ऊर्जा सुरक्षा

- पर्यावरण सुरक्षा
- प्रवासी और शरणार्थी
- जल सुरक्षा
- अंतर्राष्ट्रीय आतंकवाद
- साइबर सुरक्षा
- जलवायु परिवर्तन
- मानव अधिकार
- गरीबी और विकास
- धर्म, संस्कृति और पहचान की राजनीति की भूमिका
- युद्ध की बदलती प्रकृति
- वैश्विक स्वास्थ्य चुनौतियाँ

भारत और उसके पड़ोसी संबंध

- भारत और पड़ोसी नीति — प्रमुख चालक
- भारत और भूटान संबंध
- भारत और नेपाल संबंध
- भारत और बांग्लादेश संबंध
- भारत और म्यांमार संबंध
- भारत और श्रीलंका संबंध
- भारत और मालदीव संबंध
- भारत और अफगानिस्तान संबंध

भारत से जुड़े द्विपक्षीय क्षेत्रीय और वैश्विक समूह और समझौते तथा भारत के हितों को प्रभावित करने वाले

I. भारत और अफ्रीका के साथ उसके द्विपक्षीय संबंध

- भारत और अफ्रीकी नीति
- भारत और मॉरीशस संबंध
- भारत और केन्या संबंध
- भारत और मोजाम्बिक संबंध
- भारत और नाइजीरिया संबंध
- भारत और अंगोला संबंध
- भारत और सेशेल्स संबंध
- भारत और नामीबिया संबंध
- भारत और घाना तथा कोटे डी आइवर संबंध
- भारत और दक्षिण अफ्रीका संबंध
- भारत और रवांडा संबंध
- भारत और युगांडा संबंध
- अफ्रीका तक भारत की पहुंच

II. भारत और मध्य एशिया के साथ उसके द्विपक्षीय संबंध

- भारत और मध्य एशिया नीति
- भारत और कजाकिस्तान संबंध

- भारत और किर्गिज़ गणराज्य संबंध
- भारत और ताजिकिस्तान संबंध
- भारत और तुर्कमेनिस्तान संबंध
- भारत और उज़्बेकिस्तान संबंध

III. भारत और दक्षिण पूर्व एशिया तथा ओशिनिया में द्विपक्षीय संबंध

- भारत और दक्षिण पूर्व एशिया नीति
- भारत और ऑस्ट्रेलिया संबंध
- भारत और वियतनाम संबंध
- भारत और दक्षिण कोरिया संबंध
- भारत और उत्तर कोरिया संबंध
- भारत और फिजी संबंध
- भारत और इंडोनेशिया संबंध
- भारत और थाईलैंड संबंध
- भारत और फिलीपींस संबंध
- भारत और मलेशिया संबंध

IV. भारत और यूरोप में द्विपक्षीय संबंध

- भारत और यूरोप नीति
- भारत और फ्रांस संबंध
- भारत और जर्मनी संबंध
- भारत और बेल्जियम संबंध
- भारत और स्विट्जरलैंड संबंध
- भारत और इटली संबंध
- भारत और पोलैंड संबंध
- भारत और ग्रीस संबंध
- भारत और डेनमार्क संबंध
- भारत और ऑस्ट्रिया संबंध
- भारत और नॉर्वे संबंध
- भारत और नीदरलैंड संबंध
- भारत और यूक्रेन संबंध

V. भारत और पश्चिम एशिया में उसके द्विपक्षीय संबंध

- भारत और पश्चिम एशिया नीति
- भारत और मिस्र संबंध
- भारत और कतर संबंध
- भारत और तुर्की संबंध
- भारत और संयुक्त अरब अमीरात संबंध
- भारत और सऊदी अरब संबंध
- भारत और बहरीन संबंध
- भारत और कुवैत संबंध
- भारत और ओमान संबंध
- भारत और फिलिस्तीन संबंध
- भारत और इराक संबंध

VI. भारत और लैटिन अमेरिका में उसके द्विपक्षीय संबंध

- भारत और लैटिन अमेरिका नीति
- भारत और वेनेजुएला संबंध
- भारत और मैक्सिको संबंध
- भारत और ब्राजील संबंध
- भारत और अर्जेंटीना संबंध

VII. भारत और मध्य शक्तियों के साथ उसके संबंध

- मध्य शक्ति की अवधारणा
- भारत और मध्य शक्ति कूटनीति
- भारत और ईरान संबंध
- भारत और कनाडा संबंध
- भारत और ग्रेट ब्रिटेन

VIII. भारत और महान शक्तियों के साथ उसके संबंध

- भारत और जापान संबंध
- भारत और संयुक्त राज्य अमेरिका संबंध
- भारत और इज़राइल संबंध
- भारत और रूस संबंध

IX. भारत और मुख्य पड़ोसियों के साथ संबंध

- भारत और पाकिस्तान संबंध
- भारत और चीन संबंध

अंतर्राष्ट्रीय संबंधों की आधारशिला

अंतर्राष्ट्रीय संबंधों में राज्य का विकास और प्रासंगिकता

1. अंतर्राष्ट्रीय संबंधों का अध्ययन क्यों आवश्यक है**? (Why we study International Relations?)**

अंतर्राष्ट्रीय संबंध (International Relations - IR) दुनिया के राष्ट्र-राज्यों के बीच होने वाली आपसी क्रियाओं (interactions) और उनके परिणामस्वरूप आबादी पर पड़ने वाले ऐतिहासिक, राजनीतिक और सामाजिक-आर्थिक प्रभावों का अध्ययन है। चूँकि सभी व्यक्ति किसी-न-किसी राज्य में रहते हैं और कोई भी राज्य अलग-थलग नहीं रहता, इसलिए इन आपसी संबंधों को समझना बहुत महत्वपूर्ण है। प्राचीन काल से चले आ रहे इन संबंधों का स्वरूप आज के वैश्वीकृत युग में काफी बदल गया है। अंतर्राष्ट्रीय संबंधों के अध्ययन में पहला कदम 'राज्य' की अवधारणा को समझना है—यानी इसकी उत्पत्ति, विकास और वर्तमान भूमिका क्या है।

2. राज्य का ऐतिहासिक विकास **(Historical Evolution of the State)**

राज्य कोई प्राकृतिक इकाई नहीं, बल्कि एक मानव-निर्मित संरचना (man-made construct) है। इसकी उत्पत्ति का पता प्रारंभिक मानव समाजों के घुमंतू, शिकारी-संग्राहक जीवन से एक स्थायी कृषि जीवन में परिवर्तन से लगाया जा सकता है। इस बदलाव के कारण निश्चित क्षेत्रों में जनसंख्या बढ़ी, जिससे छोटे-छोटे समाज बने, जो अक्सर नदियों के किनारे बसे थे, जैसा कि सिंधु घाटी सभ्यता जैसे शुरुआती उदाहरणों से पता चलता है।

- व्यवस्था और सत्ता का निर्माण (Formation of Order and Authority): जैसे-जैसे ये समाज बड़े होते गए, कबीलाई जीवन की अराजकता को नियंत्रित करने के लिए एक "आचार संहिता" (code of conduct) की आवश्यकता महसूस हुई। इसके बाद, इन नियमों को लागू करने के लिए एक प्राधिकरण या सत्ता (authority) की आवश्यकता पड़ी। यह सत्ता शुरू में बुजुर्गों के पास थी, लेकिन धीरे-धीरे समूह के सबसे शक्तिशाली व्यक्ति के पास चली गई।
- राजनीतिक संरचनाओं का उदय (The Emergence of Political Formations): बाहरी समूहों से लोगों और उनकी भूमि दोनों की सुरक्षा (protection) की आवश्यकता राजनीतिक संरचनाओं के गठन का मुख्य कारण बनी। इनका नेतृत्व एक मुखिया (chief) करता था, जिसकी भूमिका सुरक्षा सुनिश्चित करना था। समय के साथ, यह रक्षक एक राजा (king) के रूप में विकसित हुआ, जिसे अक्सर दैवीय शक्तियों से युक्त माना जाता था।

3. मुख्य ऐतिहासिक चरण और महत्वपूर्ण मोड़ **(Key Historical Phases and Turning Points)**

राज्य के विकास को कई अलग-अलग ऐतिहासिक अवधियों के माध्यम से समझा जा सकता है:

- प्राचीन और रोमन काल (Ancient and Roman Times): प्राचीन दुनिया में, जिसमें ग्रीक शहर-राज्य प्रणाली भी शामिल है, संप्रभुता (sovereignty) की आधुनिक अवधारणा मौजूद नहीं थी। रोमन साम्राज्य के दौरान, सम्राट और पोप (Papacy) के नए उभरे धार्मिक अधिकार के बीच सत्ता बँट गई।
- मध्यकालीन सामंती व्यवस्था (The Medieval Feudal Order): रोमन काल के बाद, मध्ययुगीन समाज सामंतवाद (feudalism) पर आधारित था।
- वेस्टफेलिया की संधि (1648) (The Peace of Westphalia): सामंती व्यवस्था को पुनर्जागरण (Renaissance) और धर्मसुधार (Reformation) ने निर्णायक रूप से तोड़ दिया। इसका समापन 1648 में वेस्टफेलिया की संधि के रूप में हुआ, जो एक ऐतिहासिक घटना थी जिसने संप्रभुता के सिद्धांत पर आधारित पहले आधुनिक राष्ट्र-राज्यों का निर्माण किया।
- वेस्टफेलिया-पश्चात युग (The Post-Westphalian Era): इस संधि के बाद, राजाओं ने अपनी पूर्ण शक्ति को मजबूत किया और राज्य पर पोप के अधिकार को निर्णायक रूप से समाप्त कर दिया। इस बदलाव ने आधुनिक शासन कला (statecraft) को जन्म दिया। इन नए राष्ट्र-राज्यों ने साम्राज्यवाद (imperialism) और उपनिवेशवाद (colonialism) जैसी विस्तारवादी नीतियों को आगे बढ़ाया, जिसने अंततः प्रथम विश्व युद्ध को जन्म दिया।
- विश्व युद्ध और शीत युद्ध (The World Wars and the Cold War): प्रथम विश्व युद्ध के बाद की गई वर्साय की संधि (Treaty of Versailles) को द्वितीय विश्व युद्ध के बीज बोने का कारण माना जाता है। द्वितीय विश्व

युद्ध के बाद की अवधि में दो महाशक्तियों- संयुक्त राज्य अमेरिका और सोवियत संघ (USSR) का उदय हुआ, जिनके आपसी अविश्वास ने दुनिया को शीत युद्ध (Cold War) में धकेल दिया।
- शीत युद्ध-पश्चात युग (The Post-Cold War Era): 1989 में साम्यवाद के अंत और सोवियत संघ के पतन ने शीत युद्ध की समाप्ति और संयुक्त राज्य अमेरिका के नेतृत्व में एकध्रुवीय विश्व (unipolar world) की शुरुआत को चिह्नित किया।

4. वैश्वीकरण के युग में राज्य **(The State in the Age of Globalization)**

एकध्रुवीय काल में वैश्वीकरण (globalization) का उदय हुआ, जो एक ऐसी शक्तिशाली नई ताकत थी जिसके कारण कई विद्वानों ने यह भविष्यवाणी की कि राज्य अप्रासंगिक (redundant) हो जाएगा। हालाँकि, यह सच नहीं है। यद्यपि वैश्वीकरण ने राज्य की पूर्ण शक्ति को चुनौती देकर उसके स्वरूप को बदल दिया है, लेकिन राज्य की मौलिक भूमिका बरकरार है। वैश्वीकरण स्वयं केवल स्थिरता, कानून के शासन (rule of law) और सामाजिक व्यवस्था (social order) की स्थितियों में ही फल-फूल सकता है, जिसकी गारंटी केवल राज्य नामक संस्था ही दे सकती है। इस प्रकार, राज्य को प्रतिस्थापित (replace) नहीं किया गया है, बल्कि उसने एक वैश्वीकृत दुनिया में अपने कार्य को अनुकूलित (adapt) कर लिया है।

5. मुख्य शब्दावली **(Core Terminologies)**

यह दस्तावेज़ तीन आवश्यक शब्दों को परिभाषित करके समाप्त होता है:

- राज्य (State): एक राजनीतिक संघ जिसका एक परिभाषित क्षेत्र, एक स्थायी आबादी और एक संप्रभु सरकार होती है।
- संप्रभुता (Sovereignty): राज्य से उच्च किसी भी सत्ता की अनुपस्थिति की स्थिति, जो उसे घरेलू और अंतर्राष्ट्रीय मामलों में किसी उच्च सत्ता के प्रति जवाबदेह हुए बिना स्वतंत्र निर्णय लेने की स्वतंत्रता देती है।
- सुरक्षा (Security): किसी भी खतरे की अनुपस्थिति की स्थिति, जिसे सूक्ष्म स्तर पर (मानव सुरक्षा), राज्य स्तर पर (राष्ट्रीय सुरक्षा), और वैश्विक स्तर पर (अंतर्राष्ट्रीय सुरक्षा) समझा जा सकता है।

अंतर्राष्ट्रीय संबंधों में प्रमुख शब्द

यह सारांश अंतर्राष्ट्रीय संबंधों, परमाणु कूटनीति, और आर्थिक एकीकरण में उपयोग होने वाले आवश्यक शब्दों और अवधारणाओं का एक संक्षिप्त अवलोकन प्रदान करता है, जैसा कि प्रदान किए गए दस्तावेज़ में विस्तृत है।

1. अंतर्राष्ट्रीय संबंधों के मूल शब्द **(Basic Terms of International Relations)**

इस खंड में मूलभूत अवधारणाएं और ऐतिहासिक शब्दावली शामिल हैं।

- क्रिया-प्रतिक्रिया ***(Action-Reaction):*** यह लेविस फ्राई रिचर्डसन द्वारा दिया गया एक सिद्धांत है जो हथियारों की दौड़ की गतिशीलता का वर्णन करता है, जहाँ एक राज्य द्वारा सैन्य क्षमता बढ़ाना दूसरे राज्य से वैसी ही प्रतिक्रिया को उकसाता है।
- कर्ता/पात्र ***(Actor):*** अंतर्राष्ट्रीय संबंधों में भूमिका निभाने वाली कोई भी इकाई, जिसमें राज्य, संगठन (जैसे संयुक्त राष्ट्र), और यहाँ तक कि प्रभावशाली व्यक्ति भी शामिल हैं।
- अधिनिर्णय ***(Adjudication):*** अंतर्राष्ट्रीय विवादों का निपटारा कानूनी निकायों जैसे कि अंतर्राष्ट्रीय न्यायालय (ICJ), जिसकी स्थापना 1945 में हुई थी, के माध्यम से करना।
- प्रशासित क्षेत्र ***(Administered Territory):*** प्रथम विश्व युद्ध के बाद राष्ट्र संघ (League of Nations) की एक प्रणाली जिसके तहत पूर्व जर्मन और तुर्की उपनिवेशों को 'जनादेश' (mandates) के रूप में प्रबंधित किया जाता था।
- गठबंधन ***(Alliance):*** दो या दो से अधिक राज्यों के बीच सुरक्षा सहयोग के लिए एक औपचारिक समझौता, जो शीत युद्ध की एक प्रमुख विशेषता थी।

- अराजकता ***(Anarchy):*** यथार्थवादी सिद्धांत (Realist theory) में एक मूल अवधारणा, जिसे सबसे पहले थॉमस हॉब्स ने प्रस्तुत किया था। यह अंतर्राष्ट्रीय प्रणाली में किसी केंद्रीय, सर्वोच्च सत्ता की कमी का वर्णन करती है।
- तुष्टिकरण ***(Appeasement):*** संघर्ष को रोकने के लिए एक आक्रामक राज्य की मांगों को स्वीकार करने की नीति।
- युद्धविराम संधि ***(Armistice):*** शांति वार्ता की अनुमति देने के लिए शत्रुता का एक अस्थायी, आपसी निलंबन, जैसे कि अरब-इजरायल युद्धविराम (1949-1978)।
- एशियाई टाइगर ***(Asian Tigers):*** हांगकांग, जापान, दक्षिण कोरिया, सिंगापुर और ताइवान की उच्च-विकास वाली अर्थव्यवस्थाओं के लिए एक शब्द।
- शरण ***(Asylum):*** जब एक राज्य किसी विदेशी नागरिक को संरक्षण या पनाह देता है, यह 1948 के मानवाधिकारों की सार्वभौम घोषणा के तहत राज्य का अधिकार है।
- शक्ति संतुलन ***(Balance of Power - BOP):*** एक ऐतिहासिक नीति (16वीं-20वीं शताब्दी) जिसमें राज्य किसी एक राज्य को प्रभुत्व हासिल करने से रोकने के लिए गठबंधन बनाते हैं। विद्वान हेडली बुल ने तर्क दिया कि इसने एक सार्वभौमिक साम्राज्य के गठन को रोका। इससे संबंधित शीत युद्ध का एक शब्द आतंक का संतुलन (Balance of Terror) है, जो परमाणु हथियारों के माध्यम से आपसी निवारण को संदर्भित करता है।
- बाल्कनीकरण ***(Balkanization):*** किसी क्षेत्र का छोटे-छोटे, परस्पर विरोधी राज्यों में विखंडन की प्रक्रिया, जिसका नाम ओटोमन साम्राज्य के बाद बाल्कन प्रायद्वीप के हश्र पर रखा गया।
- गृह युद्ध ***(Civil War):*** राज्य पर नियंत्रण के लिए गुटों के बीच एक आंतरिक सशस्त्र संघर्ष, जो अक्सर अलगाव, पुनर्मिलन या औपनिवेशिक शासन को समाप्त करने जैसे लक्ष्यों से प्रेरित होता है।
- शीत युद्ध ***(Cold War):*** पत्रकार वाल्टर लिपमैन द्वारा लोकप्रिय किया गया एक शब्द जो द्वितीय विश्व युद्ध के बाद अमेरिका और सोवियत संघ के नेतृत्व वाले गुटों के बीच प्रत्यक्ष युद्ध के बिना तीव्र वैचारिक, राजनीतिक और सैन्य तनाव की स्थिति का वर्णन करता है।
- उपनिवेशवाद ***(Colonialism):*** साम्राज्यवाद का एक रूप जहाँ एक "मातृ देश" एक अधीनस्थ क्षेत्र या "उपनिवेश" पर राजनीतिक और आर्थिक नियंत्रण स्थापित करता है। वि-उपनिवेशीकरण (Decolonization) इन उपनिवेशों द्वारा स्वतंत्रता प्राप्त करने की प्रक्रिया को संदर्भित करता है।
- निवारण/प्रतिरोध ***(Deterrence):*** किसी विरोधी को दंड या नकारात्मक परिणामों की धमकी देकर कोई कार्रवाई करने से रोकने की रणनीति।
- निरस्त्रीकरण ***(Disarmament):*** हथियारों, विशेष रूप से सामूहिक विनाश के हथियारों को कम करने, हटाने या समाप्त करने की प्रक्रिया।
- विफल राष्ट्र राज्य ***(Failed Nation State):*** शीत युद्ध के बाद का एक शब्द जो उन राज्यों के लिए उपयोग होता है जो प्रभावी शासन खो चुके हैं और बाहरी सहायता के बिना जीवित नहीं रह सकते।
- नरसंहार ***(Genocide):*** किसी राष्ट्रीय, जातीय, नस्लीय या धार्मिक समूह का व्यवस्थित विनाश। इस कृत्य को संयुक्त राष्ट्र नरसंहार कन्वेंशन द्वारा परिभाषित और प्रतिबंधित किया गया था, जो 1951 में लागू हुआ।
- भू-राजनीति ***(Geopolitics):*** भौगोलिक कारकों जैसे स्थान और संसाधनों के आधार पर विदेश नीति और राज्य के व्यवहार का विश्लेषण।
- महाशक्तियाँ ***(Great Powers):*** यथार्थवादी सिद्धांत का एक शब्द जो सैन्य और आर्थिक क्षमताओं के आधार पर सबसे शक्तिशाली राज्यों को दर्शाता है। इसका पहली बार औपचारिक रूप से 1817 की चौमोंट की संधि में उपयोग किया गया था।
- गनबोट कूटनीति ***(Gunboat Diplomacy):*** नौसैनिक शक्ति के खतरे या उपयोग द्वारा समर्थित बलपूर्वक विदेश नीति, यह शब्द 19वीं शताब्दी के ब्रिटिश अभ्यास से उत्पन्न हुआ।
- आधिपत्य/वर्चस्व ***(Hegemony):*** अंतर्राष्ट्रीय प्रणाली में एक राज्य का दूसरों पर राजनीतिक, आर्थिक और सैन्य रूप से प्रभुत्व।
- हॉट परस्यूट ***(Hot Pursuit):*** एक कानूनी सिद्धांत, जो समुद्री कानून से उत्पन्न हुआ है, जो एक राज्य को असाधारण परिस्थितियों में एक भागते हुए अपराधी का विदेशी अधिकार क्षेत्र में पीछा करने की अनुमति देता है।

- सैन्य-औद्योगिक परिसर ***(Military-Industrial Complex - MIC):*** अमेरिकी राष्ट्रपति ड्वाइट आइजनहावर के 1961 के विदाई भाषण का एक शब्द, जो किसी देश की सेना, उसकी सरकार और उसके रक्षा उद्योग के बीच शक्तिशाली सांठगांठ का वर्णन करता है।
- बहुध्रुवीयता ***(Multipolarity):*** तीन या अधिक प्रमुख शक्ति केंद्रों वाली एक अंतर्राष्ट्रीय प्रणाली।
- पैराडिप्लोमेसी ***(Paradiplomacy):*** जॉन किनकैड (1990) की एक अवधारणा जहां उप-राष्ट्रीय सरकारें (जैसे राज्य या प्रांत) अपने स्वयं के विदेशी संबंधों में संलग्न होती हैं।
- संधि, अभिसमय, प्रोटोकॉल ***(Treaty, Convention, Protocol):*** एक संधि राज्यों के बीच एक औपचारिक, कानूनी रूप से बाध्यकारी लिखित समझौता है। एक अभिसमय आम तौर पर वैश्विक चिंता के मुद्दे पर एक व्यापक बहुपक्षीय संधि होती है। एक प्रोटोकॉल एक अतिरिक्त कानूनी उपकरण है जो एक संधि में संशोधन या पूरक होता है। अनुसमर्थन (Ratification) किसी संधि से बंधे रहने के लिए अपनी सहमति देने का अंतिम कदम है।

2. परमाणु कूटनीति में प्रमुख शब्द **(Key Terms in Nuclear Diplomacy)**

यह खंड परमाणु नीति और शस्त्र नियंत्रण की विशेष भाषा पर केंद्रित है।

- ***123*** समझौता ***(123 Agreement):*** यह अमेरिकी परमाणु ऊर्जा अधिनियम 1954 की धारा 123 को संदर्भित करता है, जो अन्य देशों के साथ परमाणु सहयोग के लिए शर्तें स्थापित करता है। भारत-अमेरिका परमाणु समझौता 2007 में ऐसे ही एक समझौते के माध्यम से हुआ था।
- अतिरिक्त प्रोटोकॉल ***(Additional Protocol - AP):*** अंतर्राष्ट्रीय परमाणु ऊर्जा एजेंसी (IAEA) के साथ एक समझौता जो निरीक्षकों को घोषित स्थलों से परे एक राज्य की परमाणु सुविधाओं तक व्यापक पहुँच प्रदान करता है।
- शांति के लिए परमाणु ***(Atoms for Peace):*** अमेरिकी राष्ट्रपति आइजनहावर द्वारा 1953 की एक पहल, जिसका उद्देश्य विश्व स्तर पर परमाणु ऊर्जा के शांतिपूर्ण उपयोग को बढ़ावा देना था।
- नागरिक परमाणु दायित्व अधिनियम, ***2010 (CLNDA):*** परमाणु दुर्घटना की स्थिति में दायित्व को नियंत्रित करने वाला भारत का घरेलू कानून, जो आपूर्तिकर्ता के दायित्व पर अपने खंड के लिए उल्लेखनीय है।
- व्यापक परमाणु परीक्षण प्रतिबंध संधि ***(CTBT):*** 1996 की एक संधि जो सैन्य और नागरिक दोनों उद्देश्यों के लिए सभी परमाणु विस्फोटों पर प्रतिबंध लगाती है। यह अभी तक लागू नहीं हुई है।
- निरस्त्रीकरण पर सम्मेलन ***(Conference on Disarmament - CD):*** निरस्त्रीकरण समझौतों पर बातचीत के लिए जिनेवा स्थित प्रमुख बहुपक्षीय मंच।
- विखंडनीय सामग्री कट-ऑफ संधि ***(FMCT):*** परमाणु हथियारों के लिए विखंडनीय सामग्री (अत्यधिक समृद्ध यूरेनियम और प्लूटोनियम) के आगे उत्पादन को प्रतिबंधित करने के लिए एक प्रस्तावित अंतर्राष्ट्रीय संधि।
- पहले उपयोग बनाम पहले उपयोग नहीं ***(First Use vs. No First Use):*** "पहले उपयोग" की नीति संघर्ष में पहले परमाणु हथियारों का उपयोग करने का अधिकार सुरक्षित रखती है। "पहले उपयोग नहीं" की नीति केवल परमाणु हमले के जवाब में उनका उपयोग करने का वचन देती है। भारत "पहले उपयोग नहीं" की नीति रखता है।
- मिसाइल प्रौद्योगिकी नियंत्रण व्यवस्था ***(MTCR):*** 1987 में स्थापित एक अनौपचारिक राजनीतिक समझ, जिसका उद्देश्य लंबी दूरी पर बड़े पेलोड ले जाने में सक्षम मिसाइलों और मिसाइल प्रौद्योगिकी के प्रसार को सीमित करना है। भारत 2016 में इसका सदस्य बना।
- शांतिपूर्ण परमाणु विस्फोट ***(PNE):*** गैर-सैन्य उद्देश्यों के लिए एक परमाणु विस्फोट, जैसा कि 1974 में भारत द्वारा किया गया था।

3. उन्नत अवधारणाएं और राजनयिक शब्द **(Advanced Concepts and Diplomatic Terms)**

यह खंड अधिक सूक्ष्म अवधारणाओं और आधुनिक राजनयिक प्रथाओं की पड़ताल करता है।

- पिछले दरवाजे की कूटनीति ***(Backchannel Diplomacy):*** विरोधियों के बीच गुप्त वार्ता, जिसका उपयोग अक्सर सफलता प्राप्त करने के लिए किया जाता है, जैसा कि अमेरिका-ईरान वार्ता में देखा गया था।

- ब्लू/ग्रीन/ब्राउन वाटर नेवी ***(Blue/Green/Brown Water Navy):*** नौसेना की परिचालन सीमा को वर्गीकृत करने वाले शब्द। ब्राउन वाटर नदीय संचालन के लिए, ग्रीन वाटर तटीय रक्षा के लिए, और ब्लू वाटर गहरे महासागरों में शक्ति प्रदर्शित करने के लिए।
- सामूहिक सुरक्षा ***(Collective Security)***: एक सुरक्षा व्यवस्था जिसमें सभी सदस्य देश किसी एक सदस्य के खिलाफ आक्रामकता की कार्रवाई का सामूहिक रूप से जवाब देने के लिए सहमत होते हैं—"एक सब के लिए और सब एक के लिए" का सिद्धांत।
- हाइफ़नेशन/डी-हाइफ़नेशन ***(Hyphenation/Dehyphenation):*** हाइफ़नेशन तब होता है जब कोई तीसरा देश दो अन्य देशों को एक ही रणनीतिक मुद्दे के रूप में देखता है (जैसे, भारत-पाकिस्तान के प्रति ऐतिहासिक अमेरिकी नीति)। डी-हाइफ़नेशन उन्हें अलग करना और प्रत्येक के साथ उसकी अपनी योग्यता के आधार पर व्यवहार करना है।
- राष्ट्रीय हित ***(National Interest):*** लक्ष्यों और उद्देश्यों का समूह जिसे एक राज्य अपने अस्तित्व और सुरक्षा को सुनिश्चित करने के लिए अपनाता है।
- शुद्ध सुरक्षा प्रदाता ***(Net Security Provider):*** एक राज्य जो अपने क्षेत्र में सुरक्षा और स्थिरता में योगदान करने की क्षमता और इच्छा रखता है।
- पिंग-पोंग कूटनीति ***(Ping-pong Diplomacy):*** राजनयिक संवाद खोलने के लिए खेल जैसे अपरंपरागत चैनलों का उपयोग, जो 1970 के दशक की शुरुआत में अमेरिका और चीन के बीच प्रसिद्ध रूप से शुरू हुआ था।
- सॉफ्ट पावर ***(Soft Power):*** जोसेफ नाई द्वारा विकसित एक अवधारणा, जो एक राज्य की दूसरों को आकर्षण और अनुनय (जैसे, संस्कृति, राजनीतिक मूल्य) के माध्यम से प्रभावित करने की क्षमता का वर्णन करती है, न कि जबरदस्ती या भुगतान (हार्ड पावर) के माध्यम से।
- रणनीतिक साझेदारी ***(Strategic Partnership):*** साझा हितों पर निर्मित एक गहरा, दीर्घकालिक और बहुआयामी द्विपक्षीय संबंध, जो एक औपचारिक सैन्य गठबंधन से कम होता है।
- कूटनीति के ट्रैक ***(Tracks of Diplomacy):*** बातचीत के विभिन्न स्तर। ट्रैक I आधिकारिक सरकार-से-सरकार कूटनीति है। ट्रैक II में शिक्षाविदों और गैर-सरकारी संगठनों जैसे गैर-आधिकारिक कर्ता शामिल होते हैं।
- व्हाइट शिपिंग समझौता ***(White Shipping Agreement):*** समुद्री क्षेत्र जागरूकता में सुधार के लिए गैर-सैन्य वाणिज्यिक जहाजों की आवाजाही के संबंध में नौसेनाओं के बीच एक सूचना-साझाकरण समझौता।

4. आर्थिक एकीकरण में प्रयुक्त शब्द **(Terms in Economic Integration)**

यह खंड राज्यों के बीच आर्थिक सहयोग के चरणों की रूपरेखा प्रस्तुत करता है।

- द्विपक्षीय निवेश संधि ***(BIT) /*** व्यापार और निवेश फ्रेमवर्क समझौता ***(TIFA):*** मूलभूत समझौते जो निवेश के लिए नियम स्थापित करते हैं और व्यापार विवादों को हल करने के लिए एक मंच बनाते हैं।
- तरजीही व्यापार समझौता ***(PTA):*** एक समझौता जहां देश आपस में व्यापार की जाने वाली वस्तुओं की एक चयनित सूची पर टैरिफ कम करते हैं।
- मुक्त व्यापार समझौता ***(FTA):*** एक समझौता जो वस्तुओं और सेवाओं पर अधिकांश या सभी टैरिफ को समाप्त करता है, जिससे एक मुक्त-व्यापार क्षेत्र बनता है।
- ***CECA / CEPA:*** एक व्यापक आर्थिक सहयोग/भागीदारी समझौता एक FTA का गहरा रूप है जो न केवल वस्तुओं और सेवाओं बल्कि निवेश, प्रतिस्पर्धा और बौद्धिक संपदा को भी कवर करता है।
- साझा बाज़ार ***(Common Market):*** एकीकरण का एक उच्च स्तर जो सदस्य देशों के बीच माल, सेवाओं, पूंजी और श्रम की मुक्त आवाजाही की अनुमति देता है।
- सीमा शुल्क संघ ***(Customs Union):*** आर्थिक एकीकरण का उच्चतम रूप जहां सदस्य देशों के बीच न केवल मुक्त व्यापार होता है, बल्कि वे गैर-सदस्य देशों से आयात के लिए एक सामान्य बाहरी टैरिफ भी अपनाते हैं।

प्राचीन काल से यूरोप के उदय तक का अंतर्राष्ट्रीय ऐतिहासिक संदर्भ

1. नींव: इतिहास और अंतर्राष्ट्रीय समाज

अंतर्राष्ट्रीय संबंधों के अध्ययन के लिए एक ऐतिहासिक पृष्ठभूमि आवश्यक है क्योंकि इतिहास और राजनीति आंतरिक रूप से जुड़े हुए हैं, जो कूटनीति को जन्म देते हैं। इतिहास वर्तमान के लिए संदर्भ प्रदान करता है और दोहराव के पैटर्न को उजागर करता है, जैसा कि ब्रिटिश साम्राज्य से लेकर आधुनिक संयुक्त राज्य अमेरिका तक विदेशी शक्तियों के लिए अफ़गानिस्तान के लगातार रणनीतिक महत्व से स्पष्ट होता है।

इस ऐतिहासिक अध्ययन का मूल अंतर्राष्ट्रीय समाज (International Society) की अवधारणा है। विद्वान हेडली बुल द्वारा परिभाषित किए अनुसार, एक अंतर्राष्ट्रीय समाज तब उभरता है जब राज्यों का एक समूह, साझा हितों और मूल्यों को साझा करते हुए, अपने आपसी व्यवहार के लिए सामान्य नियमों के एक सेट से खुद को बांधता है, भले ही वे अंतर्राष्ट्रीय अराजकता की स्थिति में मौजूद हों (यानी, कोई उच्च सत्ता न हो)। आधुनिक यूरोपीय राज्य प्रणाली, जो 1648 की वेस्टफेलिया की संधि (Peace of Westphalia) से पैदा हुई, संप्रभुता और अहस्तक्षेप जैसे सिद्धांतों पर स्थापित ऐसे समाज का प्राथमिक उदाहरण है।

2. प्राचीन काल का अंतर्राष्ट्रीय इतिहास

कूटनीति (Diplomacy) प्राचीन काल से ही अस्तित्व में है, जिसका सबसे पहला दर्ज शांति समझौता 2300 ईसा पूर्व में एबला (सीरिया) और असीरिया के राजाओं के बीच हुआ था। प्राचीन कूटनीति, हालांकि आधुनिक राज्य प्रणाली से भिन्न थी, लेकिन इसमें संधियाँ, गठबंधन, स्वार्थ और दूतों का उपयोग जैसे मूल तत्व शामिल थे। इसकी एक अनूठी विशेषता दिव्यता का एकीकरण थी, जहाँ संधियों पर धार्मिक समारोहों के साथ मुहर लगाई जाती थी और उनके उल्लंघन को दैवीय दंड को आमंत्रित करने वाला माना जाता था।

- प्राचीन भारत और कौटिल्य का अर्थशास्त्र: कौटिल्य के अर्थशास्त्र में विस्तृत प्राचीन भारतीय कूटनीति यथार्थवाद (realism) में निहित थी। इसमें कहा गया है कि राज्य का स्व-हित (state self-interest) ही विदेश नीति का मुख्य चालक है। गठबंधन अस्थायी होते हैं और आपसी लाभ पर आधारित होते हैं। कौटिल्य का मंडल सिद्धांत (Mandala Theory) प्रस्तावित करता है कि एक राज्य का तत्काल पड़ोसी एक स्वाभाविक दुश्मन है, जबकि पड़ोसी का पड़ोसी एक स्वाभाविक सहयोगी है। कूटनीति को दुश्मनों को कमजोर करने के एक उपकरण के रूप में देखा जाता था, जिसमें राजदूत राजनयिक छूट के तहत जासूसों के रूप में कार्य करते थे।
- प्राचीन चीन और सन त्ज़ु की द आर्ट ऑफ़ वॉर: चीनी कूटनीति सांस्कृतिक श्रेष्ठता के विचार पर आधारित थी। विद्वान सन त्ज़ु ने सहयोग और विश्वास पर बने महान शक्ति संबंधों की वकालत की, और युद्ध के बजाय धोखे से युद्ध (warfare by deception)—यानी बिना लड़े दुश्मन को वश में करने—का समर्थन किया।
- प्राचीन ग्रीस और शक्ति संतुलन: स्वतंत्र शहर-राज्यों की ग्रीक प्रणाली, जो आम भाषा और धर्म से बंधी थी, शक्ति संतुलन (balance of power) की राजनीति का एक प्रारंभिक उदाहरण प्रदान करती है। स्पार्टा और एथेंस जैसे शहर-राज्यों ने अपने हितों को सुरक्षित करने के लिए प्रतिद्वंद्वी लीग (क्रमशः पेलोपोनेसियन लीग और डेलियन लीग) का निर्माण किया। 404 ईसा पूर्व में एथेंस की हार के बाद, कोरिंथ और थेब्स जैसे अन्य राज्यों ने बढ़ते स्पार्टन आधिपत्य का मुकाबला करने के लिए उसके साथ गठबंधन किया, जो संतुलन बनाए रखने के लिए आधिपत्य-विरोधी गठबंधनों के गठन को प्रदर्शित करता है।

3. मध्यकालीन युग का अंतर्राष्ट्रीय इतिहास

यूरोप में मध्ययुगीन काल की विशेषता सामंतवाद (feudalism) थी, जो एक श्रेणीबद्ध और बंद व्यवस्था थी जहाँ भूमि-स्वामी रईसों के पास राजाओं की तुलना में अधिक व्यावहारिक शक्ति थी। इस युग के दौरान अंतर्राष्ट्रीय कूटनीति का विकास नहीं हुआ।

- रोमन साम्राज्य: रोम का इतिहास लगभग 753 ईसा पूर्व से शुरू होकर 1453 ईस्वी में इसके पतन तक फैला है। प्रारंभ में एक गणराज्य, यह 27 ईसा पूर्व से एक साम्राज्य बन गया। प्रशासनिक चुनौतियों के कारण, सम्राट डायोक्लेटियन ने 285 ईस्वी में साम्राज्य को पश्चिमी रोम और संसाधन-संपन्न पूर्वी रोम (बीजान्टिन साम्राज्य) में विभाजित कर दिया।
- पतन और अंत: 410 ईस्वी के आसपास, बर्बर आक्रमणों ने पश्चिमी रोम को कमजोर कर दिया, जिससे वह "अंधकार युग" में चला गया। पूर्वी और पश्चिमी चर्चों के बीच तनाव के कारण 1054 ईस्वी में ग्रेट शिज़्म (Great Schism) हुआ, जिसने ईसाई चर्च को औपचारिक रूप से विभाजित कर दिया। इस आंतरिक कलह ने बीजान्टिन

को कमजोर कर दिया, जिन्हें 1076 ईस्वी में मंज़िकर्ट के युद्ध में सेल्जुक तुर्कों के हाथों एक बड़ी हार का सामना करना पड़ा। अंतिम झटका 1453 ईस्वी में लगा जब ओटोमन तुर्कों ने कॉन्स्टेंटिनोपल शहर पर कब्जा कर लिया, जो बीजान्टिन साम्राज्य के अंत का प्रतीक था।

4. आधुनिक यूरोपीय अंतर्राष्ट्रीय समाज का उदय

मध्ययुगीन से आधुनिक दुनिया में संक्रमण कई परस्पर जुड़ी घटनाओं से प्रेरित था जिसने यूरोपीय समाज, राजनीति और दुनिया के साथ उसके संबंधों को नया रूप दिया।

- पुनर्जागरण (The Renaissance): 1453 में कॉन्स्टेंटिनोपल के पतन के कारण विद्वान इटली भाग गए। इसने पुनर्जागरण को जन्म दिया, जो प्राचीन ग्रीक और रोमन कला, साहित्य और तर्क में रुचि का "पुनर्जन्म" था। प्रिंटिंग प्रेस के आविष्कार और स्थानीय भाषाओं के उदय ने इन नए विचारों को व्यापक रूप से फैलाया।
- धर्मसुधार (The Reformation): आलोचनात्मक जांच की नई भावना ने लोगों को कैथोलिक चर्च के अधिकार पर सवाल उठाने के लिए प्रेरित किया। 1517 में, मार्टिन लूथर ने भोग-पत्रों (indulgences) की बिक्री को चुनौती दी, जिससे धर्मसुधार आंदोलन शुरू हुआ। इस आंदोलन ने अंततः पश्चिमी ईसाई धर्म को कैथोलिक और प्रोटेस्टेंट धर्म में विभाजित कर दिया और तीस वर्षीय युद्ध का कारण बना।
- वेस्टफेलिया की संधि (1648): इन संधियों के समूह ने धार्मिक युद्धों को समाप्त कर दिया और आधुनिक अंतर्राष्ट्रीय प्रणाली के मूलभूत सिद्धांतों की स्थापना की:
    - राज्य संप्रभुता (State Sovereignty): शासकों को बाहरी (पोप) हस्तक्षेप से मुक्त होकर अपने राज्य का धर्म निर्धारित करने का अधिकार था।
    - राष्ट्रीय आत्मनिर्णय (National Self-Determination)।
    - शक्ति का संतुलन (Balance of Power): राज्यों के बीच आक्रामकता को रोकने के लिए एक मानदंड के रूप में स्थापित।
    - राजनयिक कांग्रेस (Diplomatic Congress): बातचीत के माध्यम से विवादों को निपटाने के लिए एक मिसाल कायम की गई।
- ज्ञानोदय और क्रांति का युग (Age of Enlightenment and Revolution): वेस्टफेलिया के बाद, ज्ञानोदय के युग ने तर्क और आलोचनात्मक सोच का समर्थन किया, जिसने बदले में राजनीतिक क्रांतियों को जन्म दिया। अमेरिकी क्रांति (1776) और फ्रांसीसी क्रांति (1789) ने अपने "स्वतंत्रता, समानता और बंधुत्व" के आदर्शों के साथ पुरानी राजशाही व्यवस्था को मौलिक रूप से चुनौती दी।
- साम्राज्यवाद और प्रथम विश्व युद्ध का मार्ग (Imperialism and the Path to World War I): पुनर्जागरण और ज्ञानोदय ने भौगोलिक खोजों और एक औद्योगिक क्रांति को भी बढ़ावा दिया। यूरोपीय राजशाही ने वणिकवाद (Mercantilism) की आर्थिक नीति अपनाई, जो व्यापार, संसाधनों और उपनिवेशों के माध्यम से धन संचय करना चाहती थी। इससे एशिया और अफ्रीका में साम्राज्यों के लिए एक भयंकर प्रतिस्पर्धा हुई। इस प्रतिद्वंद्विता को प्रबंधित करने के लिए, यूरोपीय शक्तियों ने गठबंधनों की एक जटिल प्रणाली बनाई। हालांकि, यह प्रणाली गहरे अविश्वास और महत्वाकांक्षा को नियंत्रित करने में विफल रही, जिससे एक अस्थिर वातावरण बना जहाँ एक बड़ा महाद्वीपीय संघर्ष अनिवार्य होता जा रहा था, जो अंततः प्रथम विश्व युद्ध का कारण बना।

आधुनिक काल से शीत युद्ध के आरंभ तक का अंतर्राष्ट्रीय इतिहास

यह सारांश 20वीं सदी की शुरुआत से लेकर दो विश्व युद्धों के माध्यम से शीत युद्ध की शुरुआत तक के अंतर्राष्ट्रीय संबंधों के ऐतिहासिक पथ का विवरण देता है, जैसा कि प्रदान किए गए दस्तावेज़ में उल्लिखित है।

1. प्रथम विश्व युद्ध से पहले यूरोपीय संदर्भ **(**लगभग **1900)**

1900 तक, यूरोप वैश्विक शक्ति का केंद्र था, लेकिन यह तीव्र प्रतिस्पर्धा का परिदृश्य भी था। औद्योगिक क्रांति ने ब्रिटेन, फ्रांस और एक नव एकीकृत जर्मनी में मजबूत अर्थव्यवस्थाएं बना दी थीं। जर्मनी, अपनी वेल्टपोलिटिक (विश्व नीति) के तहत, तेजी से औद्योगीकरण कर रहा था और ब्रिटिश तथा फ्रांसीसी प्रभुत्व को चुनौती दे रहा था, जिससे एक महत्वपूर्ण

एंग्लो-जर्मन नौसैनिक प्रतिद्वंद्विता हुई। संयुक्त राज्य अमेरिका भी, एक सदी तक बिना किसी बड़े बाहरी हस्तक्षेप के अपनी अर्थव्यवस्था विकसित करने के बाद, एक महत्वपूर्ण वैश्विक खिलाड़ी के रूप में उभर रहा था।

इस आपसी संदेह और औपनिवेशिक संपत्ति तथा आर्थिक वर्चस्व के लिए प्रतिस्पर्धा ने शक्ति संतुलन बनाए रखने के लिए कठोर गठबंधन प्रणालियों का गठन किया:

- ट्रिपल अलायंस (1882): जर्मनी और ऑस्ट्रिया-हंगरी (बाद में इटली शामिल हुआ)।
- ट्रिपल एंटेंट: फ्रांस और रूस (1894), ब्रिटेन और फ्रांस (1904), और ब्रिटेन और रूस (1907) को जोड़ने वाले समझौतों की एक श्रृंखला, जिसने प्रभावी रूप से जर्मनी को घेर लिया।

तीव्र राष्ट्रवाद, विशेष रूप से बाल्कन में, ने अस्थिरता को और बढ़ा दिया। सर्बिया का लक्ष्य सभी दक्षिण स्लावों को एक ही राज्य (यूगोस्लाविया) में एकजुट करना था, एक ऐसा लक्ष्य जो बहु-जातीय ऑस्ट्रो-हंगेरियन साम्राज्य के लिए खतरा था। रूस ने सर्बिया का समर्थन किया, बाल्कन को अपने प्रभाव क्षेत्र के रूप में देखते हुए।

2. युद्ध-पूर्व संकट **(1904-1913)**

कई राजनयिक संकटों ने तनावों को बढ़ाया और गठबंधनों को मजबूत किया:

- मोरक्कन संकट (1906): जर्मनी ने मोरक्को की स्वतंत्रता का समर्थन करके नए ब्रिटिश-फ्रांसीसी एंटेंट का परीक्षण करने का प्रयास किया। अल्जीसिरास सम्मेलन में, ब्रिटेन फ्रांस के साथ मजबूती से खड़ा रहा, जिससे जर्मनी को राजनयिक हार का सामना करना पड़ा।
- बोस्नियाई विलय (1908): ऑस्ट्रिया-हंगरी ने औपचारिक रूप से बोस्निया पर कब्जा कर लिया। इसने सर्बिया को नाराज कर दिया, जिसकी इस क्षेत्र पर महत्वाकांक्षाएं थीं, और रूस को अपमानित किया, जो अपने सहयोगी का समर्थन करने के लिए सैन्य रूप से बहुत कमजोर था।
- अगादिर संकट (1911): जर्मनी ने फ्रांसीसी प्रभाव को चुनौती देने के लिए मोरक्को के बंदरगाह अगादिर में एक गनबोट भेजी। ब्रिटिश चिंताओं ने उन्हें फिर से फ्रांस का समर्थन करने के लिए प्रेरित किया, जिससे जर्मनी को पीछे हटने पर मजबूर होना पड़ा।
- बाल्कन युद्ध (1912-1913): बाल्कन राज्यों (सर्बिया, ग्रीस, मोंटेनेग्रो, बुल्गारिया) के एक लीग ने कमजोर होते ओटोमन साम्राज्य पर हमला किया और क्षेत्र पर कब्जा कर लिया। बाद के विवादों ने क्षेत्र को और अस्थिर कर दिया।

3. प्रथम विश्व युद्ध **(1914-1918)**

"महान युद्ध" इन पूर्व-मौजूदा गठबंधनों के क्रियान्वयन से शुरू हुआ।

- चिंगारी: 28 जून, 1914 को, सर्बियाई राष्ट्रवादी गैवरिलो प्रिंसिप ने साराजेवो, बोस्निया में ऑस्ट्रो-हंगेरियन उत्तराधिकारी, आर्चड्यूक फ्रांज फर्डिनेंड की हत्या कर दी।
- श्रृंखला अभिक्रिया: ऑस्ट्रिया-हंगरी ने सर्बिया पर युद्ध की घोषणा की। रूस ने सर्बिया का समर्थन करने के लिए सेना जुटाई। जर्मनी ने रूस और उसके सहयोगी फ्रांस पर युद्ध की घोषणा की। जर्मनी द्वारा फ्रांस पर हमला करने के लिए तटस्थ बेल्जियम पर आक्रमण ने ब्रिटेन को जर्मनी पर युद्ध की घोषणा करने के लिए प्रेरित किया।
- अमेरिकी प्रवेश और निष्कर्ष: संयुक्त राज्य अमेरिका 1917 में युद्ध में शामिल हुआ। इसने शक्ति संतुलन को मित्र राष्ट्रों (Allied Powers) के पक्ष में झुका दिया। केंद्रीय शक्तियाँ (Central Powers - जर्मनी, ऑस्ट्रिया-हंगरी, ओटोमन साम्राज्य) मित्र राष्ट्रों (ब्रिटेन, फ्रांस, अमेरिका, इटली और अन्य) से हार गईं।

4. अंतर-युद्ध अवधि और दोषपूर्ण शांति **(1919-1939)**

प्रथम विश्व युद्ध की समाप्ति के बाद शांति संधियों की एक श्रृंखला हुई, जिसने यूरोप को नया आकार दिया लेकिन भविष्य के संघर्ष के बीज भी बो दिए।

- वर्साय की संधि (1919): इसने जर्मनी पर "युद्ध अपराध खंड," भारी वित्तीय मुआवजा, गंभीर सैन्य सीमाएं और महत्वपूर्ण क्षेत्रीय नुकसान थोपे। इसने सामूहिक सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिए राष्ट्र संघ (League of Nations) की भी स्थापना की।
- अन्य संधियाँ:
    - सेंट-जर्मेन की संधि (1919): ऑस्ट्रो-हंगेरियन साम्राज्य को भंग कर दिया।
    - ट्रायोन की संधि (1920): हंगरी से उसका दो-तिहाई क्षेत्र छीन लिया।
    - नुइली की संधि (1919): बुल्गारिया पर क्षेत्रीय नुकसान थोपा।
    - सेवर्स की संधि (1920): ओटोमन साम्राज्य को तोड़ दिया।
- अधिनायकवाद का उदय:
    - इटली: शांति समझौते और आर्थिक अराजकता से असंतोष ने बेनिटो मुसोलिनी और पहले फासीवादी राज्य के उदय का मार्ग प्रशस्त किया।
    - जर्मनी: लोकतांत्रिक वाइमर गणराज्य महामंदी (1929) से पंगु हो गया था। इस अस्थिरता ने एडॉल्फ हिटलर की नाजी पार्टी को 1933 में सत्ता में आने दिया। हिटलर ने अपनी लेबेन्सराम (रहने की जगह) की नीति को आगे बढ़ाया।
    - रूस: 1917 की बोल्शेविक क्रांति, जिसका नेतृत्व व्लादिमीर लेनिन ने किया, ने दुनिया के पहले साम्यवादी राज्य, यूएसएसआर की स्थापना की। जोसेफ स्टालिन ने क्रूर शुद्धीकरण के माध्यम से सत्ता को मजबूत किया।
    - जापान: 1930 के दशक के आर्थिक संकट के दौरान जापान की सेना ने नियंत्रण हासिल कर लिया। इसने 1931 में मंचूरिया पर आक्रमण किया और राष्ट्र संघ को छोड़ दिया।

5. द्वितीय विश्व युद्ध **(1939-1945)**

राष्ट्र संघ की विफलता और धुरी शक्तियों के आक्रामक विस्तारवाद ने दूसरे वैश्विक संघर्ष को जन्म दिया।

- प्रकोप: 1939 में, हिटलर ने पोलैंड पर आक्रमण किया, जिससे ब्रिटेन और फ्रांस ने जर्मनी पर युद्ध की घोषणा की। धुरी शक्तियाँ (Axis Powers - जर्मनी, इटली, जापान) का सामना मित्र राष्ट्रों (Allies) से हुआ।
- मुख्य घटनाएँ:
    - जर्मनी के ब्लिट्जक्रेग ने 1940 तक डेनमार्क, नॉर्वे, नीदरलैंड, बेल्जियम और फ्रांस पर विजय प्राप्त कर ली।
    - जून 1941 में, हिटलर ने ऑपरेशन बारबारोसा शुरू किया, जो सोवियत संघ पर एक विशाल आक्रमण था।
    - 7 दिसंबर, 1941 को, जापान ने पर्ल हार्बर पर अमेरिकी नौसैनिक अड्डे पर हमला किया, जिससे अमेरिका युद्ध में शामिल हो गया।
    - 6 जून, 1944 को, मित्र राष्ट्रों ने ऑपरेशन ओवरलॉर्ड (डी-डे) शुरू किया, जिससे पश्चिमी यूरोप में एक दूसरा मोर्चा खुल गया।
    - मई 1945 में जर्मनी ने बिना शर्त आत्मसमर्पण कर दिया।
    - अमेरिका ने हिरोशिमा (6 अगस्त, 1945) और नागासाकी (9 अगस्त, 1945) पर परमाणु बम गिराए, जिससे 14 अगस्त, 1945 को जापान ने आत्मसमर्पण कर दिया और युद्ध समाप्त हो गया।

6. शीत युद्ध का आरंभ

द्वितीय विश्व युद्ध की समाप्ति पर विफल राष्ट्र संघ के स्थान पर संयुक्त राष्ट्र (United Nations) की स्थापना हुई। हालाँकि, युद्ध ने विरोधी विचारधाराओं वाली दो विजयी महाशक्तियों को भी छोड़ दिया: पूंजीवादी संयुक्त राज्य अमेरिका और साम्यवादी सोवियत संघ। उनके आपसी अविश्वास और वैश्विक प्रभाव के लिए प्रतिस्पर्धा ने एक नए ऐतिहासिक चरण की शुरुआत को चिह्नित किया: शीत युद्ध (The Cold War)।

शीत युद्ध के दौरान अंतर्राष्ट्रीय इतिहास **(1945-1991)**

यह सारांश द्वितीय विश्व युद्ध के बाद के समझौतों से लेकर सोवियत संघ के पतन तक, शीत युद्ध युग की प्रमुख घटनाओं, नीतियों और महत्वपूर्ण मोड़ों की रूपरेखा प्रस्तुत करता है, जैसा कि प्रदान किए गए दस्तावेज़ में विस्तृत है।

1. शीत युद्ध का संस्थानीकरण **(1945-1949)**

द्वितीय विश्व युद्ध की समाप्ति स्थायी शांति नहीं लाई, बल्कि संयुक्त राज्य अमेरिका और सोवियत संघ के बीच एक नया द्विध्रुवीय संघर्ष लेकर आई। इस विभाजन की नींव युद्ध के बाद के सम्मेलनों में रखी गई थी।

- याल्टा और पॉट्सडैम सम्मेलन (1945): विजयी शक्तियाँ दुनिया को पुनर्गठित करने के लिए मिलीं। जबकि उन्होंने सफलतापूर्वक संयुक्त राष्ट्र (UN) की स्थापना की, पोलैंड और जर्मनी के भविष्य को लेकर गहरे मतभेद उभरे।
    - पोलैंड: स्टालिन भविष्य के आक्रमणों को रोकने के लिए पूर्वी यूरोप में एक सोवियत प्रभाव क्षेत्र बनाने के लिए दृढ़ थे। लंदन में एक निर्वासित पोलिश सरकार की उपस्थिति के बावजूद, स्टालिन ने पोलैंड के लुबलिन में एक साम्यवादी-समर्थक सरकार स्थापित की। इस कदम ने, हंगरी, बुल्गारिया, रोमानिया और अल्बानिया में समान शासन स्थापित करने के साथ, विंस्टन चर्चिल को यह घोषणा करने के लिए प्रेरित किया कि यूरोप में एक "लौह आवरण" (Iron Curtain) गिर गया है, जो साम्यवादी पूर्व को पूंजीवादी पश्चिम से अलग करता है।
    - जर्मनी: देश और उसकी राजधानी बर्लिन को अमेरिका, ब्रिटेन, फ्रांस और यूएसएसआर द्वारा नियंत्रित चार कब्जे वाले क्षेत्रों में विभाजित किया गया था।
- रोकथाम और जवाबी कदम:
    - ट्रूमैन सिद्धांत (1947): ग्रीस में एक साम्यवादी विद्रोह के जवाब में, राष्ट्रपति ट्रूमैन ने घोषणा की कि अमेरिका "गुलामी का विरोध करने वाले स्वतंत्र लोगों" का समर्थन करेगा। रोकथाम (containment) की यह नीति अमेरिकी विदेश नीति का आधार बन गई।
    - मार्शल योजना (जून 1947): ट्रूमैन सिद्धांत का आर्थिक घटक, इस योजना ने पश्चिमी यूरोप के पुनर्निर्माण और साम्यवाद के प्रसार को रोकने के लिए भारी वित्तीय सहायता प्रदान की। यूएसएसआर ने इसे "डॉलर साम्राज्यवाद" के रूप में खारिज कर दिया और अपनी मोलोटोव योजना और पूर्वी ब्लॉक के लिए COMECON (पारस्परिक आर्थिक सहायता परिषद) के निर्माण के साथ इसका मुकाबला किया।
    - चेकोस्लोवाकियाई तख्तापलट (1948): क्लेमेंट गॉटवाल्ड के नेतृत्व में कम्युनिस्टों ने चेकोस्लोवाकिया पर पूर्ण नियंत्रण कर लिया, जिससे पश्चिम में खलबली मच गई।
    - बर्लिन नाकाबंदी और एयरलिफ्ट (1948-49): जब पश्चिमी शक्तियों ने बर्लिन के अपने क्षेत्रों में एक नई मुद्रा पेश की, तो स्टालिन ने शहर तक सभी भूमि और जल पहुंच को अवरुद्ध कर दिया। अमेरिका और उसके सहयोगियों ने एक विशाल एयरलिफ्ट के साथ जवाब दिया, जब तक स्टालिन ने नाकाबंदी नहीं हटा दी, तब तक लगभग एक साल तक पश्चिम बर्लिन को आपूर्ति की। इस घटना ने जर्मनी को पश्चिम जर्मनी (संघीय गणराज्य जर्मनी) और पूर्वी जर्मनी (जर्मन लोकतांत्रिक गणराज्य) में विभाजित कर दिया।
    - नाटो का गठन (1949): बर्लिन नाकाबंदी के जवाब में, अमेरिका और उसके पश्चिमी यूरोपीय सहयोगियों ने सोवियत खतरे का मुकाबला करने के लिए एक सामूहिक रक्षा गठबंधन, उत्तरी अटलांटिक संधि संगठन (NATO) का गठन किया।

2. शीत युद्ध का वैश्विक प्रसार **(1950** का दशक**)**

संघर्ष जल्दी ही यूरोप से आगे बढ़कर प्रभाव के लिए एक वैश्विक संघर्ष बन गया।

- कोरियाई युद्ध (1950-53): द्वितीय विश्व युद्ध के बाद, कोरिया को 38वीं समानांतर रेखा (38th Parallel) पर एक सोवियत-समर्थित उत्तर और एक अमेरिका-समर्थित दक्षिण में विभाजित किया गया था। जून 1950 में, उत्तर कोरिया ने दक्षिण पर आक्रमण किया। अमेरिका ने, एक संयुक्त राष्ट्र गठबंधन का नेतृत्व करते हुए, आक्रमण को

पीछे धकेलने के लिए हस्तक्षेप किया। युद्ध एक गतिरोध में समाप्त हुआ, जिसमें 38वीं समानांतर रेखा को सीमा के रूप में फिर से स्थापित किया गया।

- गठबंधनों का विस्तार: अमेरिका ने यूएसएसआर और चीन को घेरने के लिए दुनिया भर में गठबंधन बनाए, जिसमें SEATO (दक्षिण पूर्व एशिया संधि संगठन) और मध्य पूर्व में बगदाद पैक्ट शामिल थे। 1951 में, अमेरिका ने जापान के साथ सैन फ्रांसिस्को की संधि पर हस्ताक्षर किए। यूएसएसआर ने 1955 में वारसॉ संधि (Warsaw Pact) बनाकर जवाब दिया, जो उसके पूर्वी यूरोपीय उपग्रह राज्यों का एक सैन्य गठबंधन था।

3. देतांत और नए संकट **(1953-1960** का दशक**)**

- ख्रुश्चेव का उदय और देतांत: 1953 में स्टालिन की मृत्यु के बाद, निकिता ख्रुश्चेव सत्ता में आए और पश्चिम के साथ "शांतिपूर्ण सह-अस्तित्व" की नीति शुरू की। तनाव में कमी की इस अवधि को देतांत (Détente) के रूप में जाना जाता है।
- प्रारंभिक देतांत का अंत: राजनीतिक नरमी के बावजूद, हथियारों की दौड़ जारी रही। सद्भावना की अवधि 1960 में अचानक समाप्त हो गई जब सोवियत संघ ने अपने क्षेत्र में एक अमेरिकी U-2 जासूसी विमान को मार गिराया।
- वियतनाम युद्ध (1954-1975): 1954 में फ्रांसीसियों की हार के बाद, वियतनाम को 17वीं समानांतर रेखा (17th Parallel) पर विभाजित किया गया था। अमेरिका ने, पूरे देश पर कम्युनिस्ट कब्जे के डर से ("डोमिनो सिद्धांत"), दक्षिण वियतनाम में साम्यवाद-विरोधी शासन का समर्थन किया। यह संघर्ष 1973 में अमेरिकी वापसी और 1975 में कम्युनिस्ट शासन के तहत वियतनाम के एकीकरण के साथ समाप्त हुआ।
- क्यूबा मिसाइल संकट (1962): 1959 में क्यूबा में फिडेल कास्त्रो के सत्ता में आने और यूएसएसआर के साथ गठबंधन करने के बाद, 1962 में अमेरिका ने क्यूबा में निर्माणाधीन सोवियत परमाणु मिसाइल स्थलों की खोज की। राष्ट्रपति कैनेडी ने द्वीप की नौसैनिक "घेराबंदी" का आदेश दिया, जिससे दुनिया परमाणु युद्ध के कगार पर आ गई। संकट तब हल हुआ जब यूएसएसआर ने क्यूबा पर आक्रमण न करने के अमेरिकी वचन और तुर्की से अमेरिकी मिसाइलों को गुप्त रूप से हटाने के बदले में मिसाइलों को हटाने पर सहमति व्यक्त की।

4. दूसरा शीत युद्ध और सोवियत संघ का पतन **(1970-1991)**

- नए सिरे से तनाव: देतांत की अवधि ख्रुश्चेव के उत्तराधिकारी, लियोनिद ब्रेझनेव के तहत जारी रही। हालांकि, उन्होंने 1968 में चेकोस्लोवाकिया पर आक्रमण के दौरान ब्रेझनेव सिद्धांत पर भी जोर दिया। देतांत 1979 में अफगानिस्तान पर सोवियत आक्रमण के साथ बिखर गया, जिससे "शीत युद्ध 2.0" की शुरुआत हुई।
- गोर्बाचेव के सुधार: 1985 में, मिखाइल गोर्बाचेव ने सत्ता संभाली और असफल सोवियत व्यवस्था को बचाने के लिए कट्टरपंथी सुधार शुरू किए:
    - ग्लास्नोस्त (खुलापन): भाषण और प्रेस की अधिक स्वतंत्रता की अनुमति दी।
    - पेरेस्त्रोइका (पुनर्गठन): आर्थिक सुधारों की शुरुआत की।
- पूर्वी ब्लॉक का पतन (1989): गोर्बाचेव के सुधारों ने उन ताकतों को उजागर किया जिन्हें वे नियंत्रित नहीं कर सके। पूर्वी यूरोप में साम्यवाद-विरोधी आंदोलन फैल गए।
    - पोलैंड: लेक वालेसा के नेतृत्व में सॉलिडैरिटी ट्रेड यूनियन आंदोलन ने स्वतंत्र चुनाव के लिए मजबूर किया।
    - हंगरी: 1990 में एक नई लोकतांत्रिक सरकार चुनी गई।
    - जर्मनी: 9 नवंबर, 1989 को, प्रदर्शनकारियों ने बर्लिन की दीवार को गिरा दिया। 1990 में चांसलर हेलमुट कोल के नेतृत्व में जर्मनी का एकीकरण हुआ।
    - चेकोस्लोवाकिया: "वेलवेट क्रांति" ने शांतिपूर्ण तरीके से साम्यवादी शासन का अंत कर दिया।
- सोवियत संघ का अंत: उपग्रह राज्यों ने स्वतंत्रता की घोषणा की। 1991 में, एक ढहती अर्थव्यवस्था और राजनीतिक व्यवस्था का सामना करते हुए, गोर्बाचेव ने इस्तीफा दे दिया और बोरिस येल्तसिन को सत्ता सौंप दी। सोवियत संघ को औपचारिक रूप से भंग कर दिया गया, जिससे शीत युद्ध का अंत हो गया।

5. आधुनिक काल का अंतिम विश्लेषण

शीत युद्ध ने एक बहुध्रुवीय शक्ति संतुलन (Balance of Power) प्रणाली से एक द्विध्रुवीय विश्व व्यवस्था में एक प्रणालीगत बदलाव को चिह्नित किया। राष्ट्र संघ और बाद में संयुक्त राष्ट्र के निर्माण ने सामूहिक सुरक्षा (Collective

Security) की दिशा में एक कदम का प्रतिनिधित्व किया। शीत युद्ध की समाप्ति के बाद से, पूर्ण संप्रभुता की अवधारणा को वैश्वीकरण और सुरक्षा का उत्तरदायित्व (Responsibility to Protect - R2P) जैसे नए मानदंडों के उदय से चुनौती मिली है।

अंतर्राष्ट्रीय संबंधों के अध्ययन के दृष्टिकोणअंतर्राष्ट्रीय संबंधों के अध्ययन के दृष्टिकोण : आदर्शवाद, यथार्थवाद, संरचनात्मक मार्क्सवाद, नवउदारवाद, नवयथार्थवाद, सामाजिक निर्माणवाद, आलोचनात्मक अंतर्राष्ट्रीय सिद्धांत, नारीवाद, उत्तरआधुनिकतावाद

अंतर्राष्ट्रीय संबंध (IR) एक गतिशील अकादमिक अनुशासन और सार्वजनिक नीति का एक क्षेत्र है जो अंतर्राष्ट्रीय प्रणाली में राज्यों और अन्य अभिनेताओं के बीच बातचीत के अध्ययन से संबंधित है। इन बातचीत में विभिन्न प्रकार के सहयोग और संघर्ष शामिल हैं।

1. अंतर्राष्ट्रीय संबंध सिद्धांत की नींव

अंतर्राष्ट्रीय संबंध की परिभाषा और दायरा

अंतर्राष्ट्रीय संबंध, एक क्षेत्र के रूप में, अंतर्राष्ट्रीय प्रणाली के भीतर राज्यों के बीच विदेशी मामलों और वैश्विक मुद्दों के अध्ययन को समाहित करता है। इसमें राज्यों, अंतर-सरकारी संगठनों (IGO), गैर-सरकारी संगठनों (NGO) और बहुराष्ट्रीय निगमों (MNC) की भूमिकाएँ शामिल हैं। अंतर्राष्ट्रीय संबंध का दायरा व्यापक है, जिसमें निम्नलिखित विषय शामिल हैं:

- शांति और संघर्ष अध्ययन: युद्ध के कारणों और शांति की स्थितियों को समझना।
- अंतर्राष्ट्रीय राजनीतिक अर्थव्यवस्था (IPE): अंतर्राष्ट्रीय प्रणाली में राजनीति और अर्थशास्त्र के बीच परस्पर क्रिया का विश्लेषण करना, जिसमें व्यापार, वित्त और विकास शामिल हैं।
- अंतर्राष्ट्रीय कानून: नियमों और सिद्धांतों का वह निकाय जिसे राज्य और अन्य अभिनेता अपने संबंधों में बाध्यकारी मानते हैं।
- वैश्विक शासन: विभिन्न तरीके जिनसे व्यक्ति और संस्थान, सार्वजनिक और निजी, अपने सामान्य मामलों का प्रबंधन करते हैं।
- मानवाधिकार: सभी मनुष्यों के अंतर्निहित सार्वभौमिक अधिकार, चाहे उनकी जाति, लिंग, राष्ट्रीयता, जातीयता, भाषा, धर्म या कोई अन्य स्थिति कुछ भी हो।
- पर्यावरणीय मुद्दे: अंतर्राष्ट्रीय पर्यावरणीय चुनौतियाँ और उन्हें संबोधित करने के अंतर्राष्ट्रीय प्रयास।

अंतर्राष्ट्रीय संबंध सिद्धांत में मुख्य बहसें

एक अकादमिक अनुशासन के रूप में अंतर्राष्ट्रीय संबंध के विकास को कई "महान बहसों" द्वारा चिह्नित किया गया है, जिन्होंने इसके वैचारिक परिदृश्य को आकार दिया है।

- प्रत्यक्षवादी बनाम उत्तर-प्रत्यक्षवादी बहस (तीसरी बहस - 1980 के दशक से):
    - अवधारणात्मक समझ: यह बहस अंतर्राष्ट्रीय संबंध अनुसंधान के ज्ञानमीमांसा (epistemology) और कार्यप्रणाली (methodology) से संबंधित है।
        - प्रत्यक्षवाद: सामाजिक घटनाओं का अध्ययन करने के लिए प्राकृतिक वैज्ञानिक विधियों के अनुप्रयोग की वकालत करता है। प्रत्यक्षवादी एक वस्तुनिष्ठ वास्तविकता में विश्वास करते हैं जिसे अनुभवजन्य रूप से (empirically) देखा, मापा और विश्लेषण किया जा सकता है ताकि कार्य-कारण संबंध स्थापित किए जा सकें और सामान्य नियम बनाए जा सकें। वे अंतर्राष्ट्रीय घटनाओं की व्याख्या और भविष्यवाणी करना चाहते हैं।
        - उत्तर-प्रत्यक्षवाद: वस्तुनिष्ठता और मूल्य-तटस्थता के प्रत्यक्षवादी दावे को चुनौती देता है। उत्तर-प्रत्यक्षवादी तर्क देते हैं कि सामाजिक वास्तविकता मानवीय विश्वासों, मूल्यों और प्रवचन के माध्यम से निर्मित होती है। वे व्याख्या और समझ पर जोर देते हैं न कि स्पष्टीकरण और भविष्यवाणी पर, शक्ति, पहचान और भाषा की भूमिका के मुद्दों पर ध्यान केंद्रित करते हैं।

    - प्रमुख विचारक:
        - प्रत्यक्षवाद: अधिकांश शुरुआती मुख्यधारा के अंतर्राष्ट्रीय संबंध सिद्धांत (जैसे व्यवहारवाद, नव-यथार्थवाद, नव-उदारवाद) से जुड़ा हुआ है।
        - उत्तर-प्रत्यक्षवाद: क्रिटिकल थ्योरी (रॉबर्ट कॉक्स), कंस्ट्रक्टिविज्म (अलेक्जेंडर वेंड्ट), उत्तर-संरचनावाद (रिचर्ड एशले, आर.बी.जे. वॉकर), नारीवाद (सिंथिया एनलो)।
    - समकालीन प्रासंगिकता: यह बहस अंतर्राष्ट्रीय संबंध विद्वानों द्वारा अनुसंधान करने, कार्यप्रणाली चुनने और वैश्विक घटनाओं की व्याख्या करने के तरीके को प्रभावित करती है, जो केवल राज्य के व्यवहार पर ध्यान केंद्रित करने से आगे बढ़कर व्यापक श्रेणी के अभिनेताओं और मुद्दों को शामिल करती है।
- पारंपरिक बनाम वैज्ञानिक दृष्टिकोण (दूसरी बहस - 1960 का दशक):
    - अवधारणात्मक समझ: यह बहस मुख्य रूप से अंतर्राष्ट्रीय संबंधों का अध्ययन करने के लिए उचित कार्यप्रणाली के बारे में थी।
        - पारंपरिक दृष्टिकोण: ऐतिहासिक विश्लेषण, दार्शनिक जांच और कानूनी तर्क पर जोर दिया। इस दृष्टिकोण का उपयोग करने वाले विद्वान अंतर्राष्ट्रीय घटनाओं को समझने के लिए अंतर्ज्ञान, निर्णय और ऐतिहासिक दस्तावेजों के अध्ययन पर निर्भर थे। उनका मानना था कि अंतर्राष्ट्रीय संबंध विज्ञान की तुलना में अधिक कला थी।
        - वैज्ञानिक (व्यवहारवादी) दृष्टिकोण: मात्रात्मक तरीकों, सांख्यिकीय विश्लेषण और परीक्षण योग्य परिकल्पनाओं के विकास के उपयोग की वकालत की। समर्थकों ने अंतर्राष्ट्रीय व्यवहार के सामान्यीकृत पैटर्न और नियमों को उजागर करने की कोशिश की, अक्सर अर्थशास्त्र और मनोविज्ञान जैसे विषयों से प्रेरणा लेते हुए।
    - प्रमुख विचारक:
        - पारंपरिक: ई.एच. कार, हंस जे. मोर्गेंथाऊ, हेडली बुल।
        - वैज्ञानिक: मॉर्टन कपलान, कार्ल ड्यूश, डेविड सिंगर।
    - ऐतिहासिक संदर्भ: द्वितीय विश्व युद्ध के बाद के युग में उभरा, विशेष रूप से शीत युद्ध और हथियारों की दौड़ के संदर्भ में, अंतर्राष्ट्रीय संबंध को प्राकृतिक विज्ञानों के समान एक अधिक कठोर और पूर्वानुमानित विज्ञान बनाने की इच्छा से प्रेरित।
    - परिणाम: बहस का कोई स्पष्ट विजेता नहीं निकला, लेकिन अनुशासन के भीतर अधिक कार्यप्रणालीगत बहुलवाद (methodological pluralism) हुआ, जिसमें गुणात्मक (qualitative) और मात्रात्मक (quantitative) दोनों तरीकों का उपयोग किया गया।

विश्लेषण के स्तर

केनेथ वॉल्ट्ज़ ने अपनी 1959 की पुस्तक मैन, द स्टेट, एंड वॉर में युद्ध के कारणों को समझने के लिए "विश्लेषण के स्तर" की अवधारणा पेश की, और विस्तार से, अंतर्राष्ट्रीय घटनाओं को समझने के लिए। ये स्तर कारण कारकों के विभिन्न सेटों पर ध्यान केंद्रित करके अंतर्राष्ट्रीय घटनाओं की व्याख्या को व्यवस्थित करने में मदद करते हैं।

- व्यक्तिगत स्तर (पहली छवि):
    - अवधारणात्मक समझ: व्यक्तिगत नेताओं और निर्णय निर्माताओं की विशेषताओं, धारणाओं, निर्णयों और मनोवैज्ञानिक पूर्वाग्रहों पर केंद्रित है। यह जांचता है कि उनके विश्वास, व्यक्तित्व और गलत धारणाएं विदेश नीति और अंतर्राष्ट्रीय परिणामों को कैसे प्रभावित कर सकती हैं।
    - उदाहरण: द्वितीय विश्व युद्ध में एडॉल्फ हिटलर की विचारधारा की भूमिका, या शीत युद्ध को समाप्त करने में मिखाइल गोर्बाचेव जैसे नेताओं की व्यक्तिगत कूटनीति।
    - प्रासंगिकता: विशिष्ट विदेश नीति विकल्पों या घटनाओं के तात्कालिक कारणों को समझने के लिए उपयोगी।
- राज्य स्तर (दूसरी छवि):
    - अवधारणात्मक समझ: राज्यों की आंतरिक विशेषताओं की जांच करता है, जिसमें उनकी राजनीतिक प्रणालियाँ (लोकतंत्र बनाम निरंकुशता), आर्थिक संरचनाएँ, नौकरशाही प्रक्रियाएँ, राष्ट्रीय हित, सामाजिक

दबाव और सांस्कृतिक मानदंड शामिल हैं। यह तर्क देता है कि घरेलू कारक एक राज्य की विदेश नीति को महत्वपूर्ण रूप से आकार देते हैं।
    - उदाहरण: लोकतांत्रिक शांति सिद्धांत (लोकतंत्रों के एक-दूसरे के साथ युद्ध में जाने की संभावना कम होती है), व्यापार नीति पर घरेलू पैरवी समूहों का प्रभाव, या किसी देश की आर्थिक प्रणाली का उसके अंतर्राष्ट्रीय व्यवहार पर प्रभाव।
    - प्रासंगिकता: यह समझाने में मदद करता है कि विभिन्न राज्य समान अंतर्राष्ट्रीय परिस्थितियों में अलग-अलग व्यवहार क्यों करते हैं।
- प्रणालीगत स्तर (तीसरी छवि):
    - अवधारणात्मक समझ: अंतर्राष्ट्रीय प्रणाली की संरचना पर ही ध्यान केंद्रित करता है, न कि आंतरिक राज्य विशेषताओं या व्यक्तिगत निर्णय निर्माताओं पर। प्रमुख संरचनात्मक तत्वों में शक्ति का वितरण (जैसे, एकध्रुवीय, द्विध्रुवीय, बहुध्रुवीय), अंतर्राष्ट्रीय संस्थानों की उपस्थिति या अनुपस्थिति, और अराजकता की प्रकृति शामिल हैं। यह तर्क देता है कि अंतर्राष्ट्रीय प्रणाली राज्य के व्यवहार को बाधित और आकार देती है।
    - उदाहरण: शीत युद्ध द्विध्रुवीय प्रणाली ने महाशक्ति प्रतिद्वंद्विता को प्रभावित किया, वैश्वीकरण का राज्य संप्रभुता पर प्रभाव, या राज्य बातचीत को आकार देने में अंतर्राष्ट्रीय कानून की भूमिका।
    - प्रासंगिकता: अंतर्राष्ट्रीय संबंधों के सामान्य पैटर्न और सभी राज्यों द्वारा सामना की जाने वाली बाधाओं को समझने के लिए एक व्यापक ढाँचा प्रदान करता है।

2. आदर्शवाद (उदारवाद / कल्पनावाद)

आदर्शवाद, जिसे अक्सर अंतर्राष्ट्रीय संबंध में उदारवाद के रूप में संदर्भित किया जाता है, एक प्रमुख सैद्धांतिक परिप्रेक्ष्य है जो प्रथम विश्व युद्ध के बाद प्रमुखता से उभरा। यह मानवीय स्वभाव के आशावादी दृष्टिकोण और अंतर्राष्ट्रीय संबंधों में प्रगति की संभावना से चिह्नित है।

ऐतिहासिक पृष्ठभूमि: अंतर-युद्ध काल

प्रथम विश्व युद्ध (1914-1918) के बाद आदर्शवाद ने महत्वपूर्ण गति प्राप्त की, एक ऐसा संघर्ष जिसने शक्ति की राजनीति और गुप्त कूटनीति के विनाशकारी परिणामों को उजागर किया। विद्वानों और नीति निर्माताओं, जो विनाश के पैमाने से स्तब्ध थे, ने भविष्य के युद्धों को रोकने के लिए सहयोग, कानून और नैतिकता पर आधारित एक नई अंतर्राष्ट्रीय व्यवस्था बनाने की मांग की। अंतर-युद्ध काल (1919-1939) के रूप में जानी जाने वाली इस अवधि में अंतर्राष्ट्रीय संस्थानों और सामूहिक सुरक्षा के लिए एक मजबूत धक्का देखा गया।

मुख्य सिद्धांत / मान्यताएँ

- मानवीय प्रगति, तर्कसंगतता और सहयोग की क्षमता में विश्वास: आदर्शवादी मानते हैं कि मनुष्य स्वाभाविक रूप से अच्छे होते हैं या कम से कम तर्कसंगत विचार और नैतिक व्यवहार में सक्षम होते हैं, जिससे सहयोग संभव और वांछनीय होता है। वे इस यथार्थवादी धारणा को अस्वीकार करते हैं कि मनुष्य स्वाभाविक रूप से स्वार्थी होते हैं।
- अंतर्राष्ट्रीय कानून, नैतिकता और अंतर्राष्ट्रीय संगठनों पर जोर: आदर्शवादी स्थापित कानूनी मानदंडों, नैतिक विचारों और बहुपक्षीय संस्थानों को मजबूत करने के लिए एक विश्व व्यवस्था की वकालत करते हैं। वे इन्हें संघर्षों के प्रबंधन और शांति को बढ़ावा देने के लिए महत्वपूर्ण उपकरण मानते हैं।
- हितों के सामंजस्य की अवधारणा: आदर्शवादी तर्क देते हैं कि राज्य अंततः शांति और समृद्धि में सामान्य हित साझा करते हैं। उनका मानना है कि प्रतिस्पर्धा के बजाय सहयोग से आपसी लाभ हो सकता है और संघर्ष अक्सर गलतफहमी या दोषपूर्ण संस्थानों से उत्पन्न होते हैं, न कि हितों के अंतर्निहित टकराव से।
- शक्ति संतुलन प्रणाली की आलोचना: आदर्शवादी शक्ति संतुलन के अत्यधिक आलोचक हैं, जिसे वे स्वाभाविक रूप से अस्थिर और युद्ध का एक प्राथमिक कारण मानते हैं। वे तर्क देते हैं कि यह हथियारों की दौड़, संदेह पर आधारित गठबंधनों और अंततः, संघर्ष की ओर ले जाता है। वे विकल्प के रूप में सामूहिक सुरक्षा को पसंद करते हैं।

प्रमुख विचारक

- इमैनुएल कांट (1724-1804): यद्यपि 18वीं सदी के दार्शनिक थे, उनका काम परपेचुअल पीस (1795) आदर्शवाद के लिए एक मूलभूत पाठ है। कांट ने तर्क दिया कि एक शाश्वत शांति लोकतांत्रिक राज्यों (गणतांत्रिक, जाँच और संतुलन के साथ), स्वतंत्र राज्यों के एक संघ (अंतर्राष्ट्रीय कानून और संगठन), और सार्वभौमिक आतिथ्य (आर्थिक अंतर-निर्भरता और व्यक्तियों के लिए सम्मान) की स्थापना के माध्यम से प्राप्त की जा सकती है।
- वुडरो विल्सन (1856-1924): 28वें अमेरिकी राष्ट्रपति, व्यवहार में आदर्शवाद के एक प्रमुख प्रस्तावक। उनके "चौदह सूत्रीय" भाषण (1918) ने प्रथम विश्व युद्ध के बाद शांति के लिए एक दृष्टिकोण की रूपरेखा तैयार की, जिसमें आत्मनिर्णय, खुली कूटनीति, समुद्र की स्वतंत्रता, मुक्त व्यापार और राष्ट्रों के एक सामान्य संघ (जो राष्ट्र संघ बन गया) के निर्माण की वकालत की गई।
- नॉर्मन एंजेल (1872-1967): ब्रिटिश पत्रकार और नोबेल शांति पुरस्कार विजेता। द ग्रेट इल्यूजन (1910) में, उन्होंने तर्क दिया कि आधुनिक औद्योगिक राष्ट्रों के लिए युद्ध आर्थिक रूप से तर्कहीन और व्यर्थ था क्योंकि अर्थव्यवस्थाओं की बढ़ती अंतर-निर्भरता थी।
- अल्फ्रेड ज़िम्मर्न (1879-1957): ब्रिटिश इतिहासकार और शास्त्रीय उदारवादी, वेल्स विश्वविद्यालय, एबरिस्टविथ में अंतर्राष्ट्रीय राजनीति के पहले प्रोफेसरों में से एक थे। उन्होंने एक अलग अकादमिक अनुशासन के रूप में अंतर्राष्ट्रीय संबंधों के अध्ययन की वकालत की और राष्ट्र संघ का समर्थन किया।

उप-विषय / प्रमुख अवधारणाएँ

- शास्त्रीय उदारवाद/आदर्शवाद:
    - अवधारणात्मक समझ: ज्ञानोदय (Enlightenment) विचार में निहित, व्यक्तिगत अधिकारों, स्वतंत्रता, लोकतंत्र और मुक्त बाजारों पर जोर देता है। अंतर्राष्ट्रीय संबंध में, यह इस विश्वास में बदल जाता है कि लोकतांत्रिक राज्य स्वाभाविक रूप से अधिक शांतिपूर्ण होते हैं, और आर्थिक अंतर-निर्भरता संघर्ष की संभावना को कम करती है।
    - प्रमुख सिद्धांत: व्यक्तियों की तर्कसंगतता, व्यक्तिगत स्वतंत्रता की खोज, सीमित सरकारी हस्तक्षेप, मुक्त व्यापार, और यह विश्वास कि कारण और सुधार के माध्यम से प्रगति संभव है।
    - समकालीन प्रासंगिकता: लोकतंत्र को बढ़ावा देने और मुक्त व्यापार समझौतों जैसे कई आधुनिक अंतर्राष्ट्रीय संस्थानों और मानदंडों के लिए दार्शनिक आधार बनाता है।
- लोकतांत्रिक शांति सिद्धांत:
    - अवधारणात्मक समझ: उदार अंतर्राष्ट्रीय संबंध सिद्धांत का एक मुख्य सिद्धांत, यह मानता है कि लोकतंत्रों के एक-दूसरे के साथ युद्ध में शामिल होने की संभावना काफी कम होती है। इसका श्रेय अक्सर साझा मूल्यों, संघर्ष समाधान के लोकतांत्रिक मानदंडों और लोकतांत्रिक प्रणालियों के भीतर संस्थागत बाधाओं (जैसे, सार्वजनिक जवाबदेही, जाँच और संतुलन) को दिया जाता है।
    - ऐतिहासिक संदर्भ: हालांकि कांट के काम में निहित था, इसने 20वीं सदी के अंत में अनुभवजन्य प्रमुखता प्राप्त की।
    - केस स्टडी: द्वितीय विश्व युद्ध के बाद से अमेरिका और ब्रिटेन, या फ्रांस और जर्मनी जैसे स्थापित लोकतंत्रों के बीच युद्धों की अनुपस्थिति।
    - आलोचनाएँ/बहसें: आलोचकों का तर्क है कि लोकतंत्रों के बीच शांति अन्य कारकों (जैसे, साझा रणनीतिक हित, आर्थिक संबंध) के कारण है या "लोकतंत्र" की परिभाषा अक्सर बहुत संकीर्ण होती है।
- सामूहिक सुरक्षा (राष्ट्र संघ एक केस स्टडी के रूप में):
    - अवधारणात्मक समझ: एक सुरक्षा व्यवस्था, जिसके तहत सभी राज्य एक-दूसरे के खिलाफ एक राज्य द्वारा किसी भी आक्रामकता का सामूहिक रूप से विरोध करने के लिए सहमत होते हैं। विचार यह है कि एक पर हमला सभी पर हमला है, जिससे आक्रामकता को रोका जा सके।
    - ऐतिहासिक संदर्भ: वुडरो विल्सन के प्रथम विश्व युद्ध के बाद शांति के दृष्टिकोण का एक केंद्रीय स्तंभ।
    - राष्ट्र संघ (1920-1946): आदर्शवादी सामूहिक सुरक्षा के लिए धक्का के प्रत्यक्ष परिणाम के रूप में स्थापित पहला प्रमुख अंतर-सरकारी संगठन। इसका प्राथमिक लक्ष्य निरस्त्रीकरण, सामूहिक सुरक्षा,

बातचीत और मध्यस्थता के माध्यम से अंतर्राष्ट्रीय विवादों को निपटाना और वैश्विक कल्याण में सुधार करके भविष्य के युद्धों को रोकना था।
    - सफलताएँ (सीमित): 1920 के दशक में छोटे-मोटे विवादों को हल किया (जैसे, Åland Islands विवाद)।
    - विफलताएँ (महत्वपूर्ण): 1930 के दशक में शक्तिशाली राज्यों द्वारा आक्रामकता को रोकने में काफी हद तक विफल रहा (जैसे, जापान का मंचूरिया पर आक्रमण, इटली का इथियोपिया पर आक्रमण, जर्मनी का पुनर्शस्त्रीकरण)। इसके निर्णयों को लागू करने में इसकी अक्षमता, सार्वभौमिक सदस्यता की कमी (जैसे, अमेरिका कभी शामिल नहीं हुआ), और सर्वसम्मति पर निर्भरता ने इसके पतन में योगदान दिया।
    - सीखे गए सबक: लीग की विफलताओं ने संयुक्त राष्ट्र के डिजाइन के लिए महत्वपूर्ण सबक प्रदान किए, जिसमें मजबूत प्रवर्तन तंत्र (जैसे, स्थायी सदस्यों के लिए सुरक्षा परिषद का वीटो अधिकार, हालांकि इसकी भी आलोचनाएँ हैं) और व्यापक सदस्यता की आवश्यकता पर जोर दिया गया।

आलोचनाएँ**:** मुख्य रूप से यथार्थवादियों द्वारा

आदर्शवाद को यथार्थवाद से अपनी सबसे महत्वपूर्ण आलोचना का सामना करना पड़ा, विशेष रूप से द्वितीय विश्व युद्ध के फैलने के बाद, जिसने अंतर-युद्ध आदर्शवादियों की आशावादी मान्यताओं को स्पष्ट रूप से बदनाम कर दिया। ई.एच. कार और हंस जे. मोर्गेंथाऊ जैसे यथार्थवादियों ने तर्क दिया कि आदर्शवादी भोले थे और अंतर्राष्ट्रीय राजनीति की वास्तविक प्रकृति को समझने में विफल रहे।

- प्रमुख यथार्थवादी आलोचनाएँ:
    - मानवीय स्वभाव के बारे में भोलापन: यथार्थवादी मानते हैं कि आदर्शवादी मानवीय स्वभाव के बारे में अत्यधिक आशावादी हैं, जो व्यक्तियों और राज्यों की विशेषता वाले अंतर्निहित स्वार्थ और शक्ति की इच्छा को अनदेखा करते हैं।
    - शक्ति का कम आंकना: यथार्थवादी तर्क देते हैं कि आदर्शवादी अंतर्राष्ट्रीय संबंधों में शक्ति की मूलभूत भूमिका को कम आंकते हैं। राज्य एक अराजक प्रणाली में काम करते हैं जहां आत्म-सहायता सर्वोपरि है, और नैतिक सिद्धांत या अंतर्राष्ट्रीय कानून अक्सर राष्ट्रीय हित और अस्तित्व के लिए द्वितीयक होते हैं।
    - राष्ट्र संघ की विफलता: राष्ट्र संघ की द्वितीय विश्व युद्ध को रोकने में असमर्थता आदर्शवादी प्रस्तावों के लिए सामूहिक सुरक्षा के बारे में एक शक्तिशाली अनुभवजन्य झटका था। यथार्थवादियों ने इसे इस बात के प्रमाण के रूप में बताया कि अकेले संस्थान शक्ति की राजनीति की वास्तविकताओं को दूर नहीं कर सकते।
    - 'क्या होना चाहिए' बनाम 'क्या है' पर ध्यान: यथार्थवादियों ने आदर्शवादियों की आलोचना की कि वे दुनिया को कैसा होना चाहिए (आदेशात्मक) पर ध्यान केंद्रित करते हैं, बजाय इसके कि यह कैसा है (वर्णनात्मक) का वस्तुनिष्ठ विश्लेषण करें।

3. यथार्थवाद (Realism)

यथार्थवाद अंतर्राष्ट्रीय संबंधों में संभवतः सबसे प्रभावशाली और स्थायी सैद्धांतिक परंपरा है। यह अंतर्राष्ट्रीय राजनीति का एक निराशावादी, फिर भी अक्सर व्यावहारिक माना जाने वाला दृष्टिकोण प्रस्तुत करता है, जो अराजक अंतर्राष्ट्रीय प्रणाली में स्व-हितैषी राज्यों के बीच शक्ति के सतत संघर्ष पर जोर देता है।

मुख्य सिद्धांत / विचार**:**

यथार्थवाद राज्यों, अंतर्राष्ट्रीय प्रणाली और मानव स्वभाव के बारे में कई मूलभूत मान्यताओं पर आधारित है:

- राज्य प्राथमिक, एकात्मक अभिनेता के रूप में: यथार्थवादी मुख्य रूप से राज्य को अंतर्राष्ट्रीय राजनीति में सबसे महत्वपूर्ण अभिनेता मानते हैं। वे अक्सर राज्य को एक एकात्मक अभिनेता के रूप में देखते हैं, जिसका अर्थ है कि आंतरिक विभाजन या भिन्न हितों के बावजूद, यह अंतर्राष्ट्रीय क्षेत्र में एक एकल, सुसंगत इकाई के रूप में कार्य

करता है। गैर-राज्य अभिनेताओं (जैसे एनजीओ, एमएनसी) को कम महत्वपूर्ण माना जाता है या राज्यों द्वारा निर्धारित ढांचे के भीतर काम करते हुए देखा जाता है।

- अंतर्राष्ट्रीय प्रणाली अराजक है: यथार्थवादी शब्दों में, अराजकता का अर्थ अराजकता या अव्यवस्था नहीं है, बल्कि राज्यों के ऊपर एक केंद्रीय, वैध प्राधिकरण की अनुपस्थिति है जो नियमों को लागू करने या संघर्ष को रोकने में सक्षम हो। ऐसा कोई विश्व सरकार नहीं है जिससे राज्य सुरक्षा या न्याय के लिए अपील कर सकें। एक उच्च प्राधिकरण की इस कमी के कारण राज्यों को अपने अस्तित्व के लिए "आत्म-सहायता" पर निर्भर रहना पड़ता है।
- राज्य अपने राष्ट्रीय हित का पीछा करने वाले तर्कसंगत अभिनेता हैं, जिसे शक्ति (Machtpolitik) के रूप में परिभाषित किया गया है: अराजकता के तहत काम करने वाले राज्यों को तर्कसंगत अभिनेता माना जाता है। इसका मतलब है कि वे अपने राष्ट्रीय हित को अधिकतम करने के लिए गणनात्मक निर्णय लेते हैं। यथार्थवादियों के लिए, राष्ट्रीय हित को मुख्य रूप से शक्ति के संदर्भ में परिभाषित किया जाता है - दूसरों को प्रभावित करने, अपने स्वयं के अस्तित्व को सुरक्षित करने और अपनी इच्छा को प्रोजेक्ट करने की क्षमता। शक्ति की इस खोज को अक्सर मैक्टपोलिटिक (शक्ति की राजनीति) के रूप में संदर्भित किया जाता है।
- मानव स्वभाव, अस्तित्व, सुरक्षा और शक्ति की राजनीति (मैक्टपोलिटिक) पर ध्यान:
    - मानव स्वभाव: विशेष रूप से शास्त्रीय यथार्थवादी, अक्सर राज्य के व्यवहार की जड़ों को मानव स्वभाव के एक निराशावादी दृष्टिकोण में देखते हैं, जिसे वे स्वाभाविक रूप से स्वार्थी, शक्ति-खोजने वाला और संघर्ष के लिए प्रवृत्त मानते हैं।
    - अस्तित्व: एक अराजक प्रणाली में, किसी भी राज्य के लिए अंतिम लक्ष्य उसका अपना अस्तित्व है। अन्य सभी लक्ष्य इस मूलभूत उद्देश्य के अधीन हैं।
    - सुरक्षा: राज्य लगातार अपनी सुरक्षा बढ़ाने की कोशिश करते हैं, जिससे अक्सर एक प्रतिस्पर्धी माहौल बनता है जहां एक राज्य की सुरक्षा में लाभ को दूसरे के नुकसान के रूप में देखा जाता है।
    - शक्ति की राजनीति: अंतर्राष्ट्रीय प्रणाली शक्ति की राजनीति की विशेषता है, जहां राज्य लगातार सापेक्ष शक्ति और प्रभाव के लिए प्रतिस्पर्धा करते हैं।

प्रमुख विचारक **(**शास्त्रीय यथार्थवाद**):**

शास्त्रीय यथार्थवाद यह मानता है कि शक्ति की इच्छा मानव स्वभाव में निहित है, एक कालातीत और सार्वभौमिक विशेषता।

- थ्यूसीडाइड्स (लगभग 460 – लगभग 400 ईसा पूर्व): प्राचीन यूनानी इतिहासकार, पेलोपोनेशियन युद्ध का इतिहास के लेखक। एथेंस और स्पार्टा के बीच युद्ध का उनका वृत्तांत अक्सर यथार्थवाद के लिए एक मूलभूत पाठ के रूप में उद्धृत किया जाता है। उन्होंने प्रसिद्ध रूप से "मेलियन संवाद" का चित्रण किया, जहाँ एथेंस ने मेलोस के कमजोर राज्य पर अपनी शक्ति का क्रूरतापूर्वक दावा किया, यह तर्क देते हुए कि "मजबूत वह करते हैं जो वे कर सकते हैं और कमजोर को वह सहना पड़ता है जो उन्हें सहना पड़ता है।" यह एक उच्च प्राधिकरण की अनुपस्थिति में शक्ति, स्व-हित और संघर्ष की अनिवार्यता के महत्व पर प्रकाश डालता है।
- निकोलस मैकियावेली (1469-1527): एक इतालवी राजनयिक और राजनीतिक दार्शनिक, जो द प्रिंस के लिए जाने जाते हैं। मैकियावेली ने राज्यकला के लिए एक व्यावहारिक और अनैतिक दृष्टिकोण की वकालत की, यह तर्क देते हुए कि शासकों को नैतिक विचारों से ऊपर राज्य की सुरक्षा और अस्तित्व को प्राथमिकता देनी चाहिए। उन्होंने प्रसिद्ध रूप से सुझाव दिया कि "प्यार करने की तुलना में डराया जाना कहीं अधिक सुरक्षित है," राजनीतिक व्यवस्था को बनाए रखने के लिए शक्ति और धोखे की आवश्यकता पर जोर देते हुए।
- थॉमस हॉब्स (1588-1679): अंग्रेजी दार्शनिक, लेवियाथन के लेखक। हॉब्स ने "प्रकृति की अवस्था" को "सभी के खिलाफ सभी का युद्ध" (बेलम ओमनिअम कॉन्ट्रा ओम्नेस) के रूप में वर्णित किया, जहाँ जीवन "अकेला, गरीब, बुरा, क्रूर और छोटा" है। उन्होंने तर्क दिया कि इस अराजक स्थिति से बचने के लिए, व्यक्ति अपनी कुछ स्वतंत्रताएं एक शक्तिशाली संप्रभु (लेवियाथन) को सौंप देते हैं जो व्यवस्था लागू कर सकता है। यथार्थवादी इस अवधारणा को अंतर्राष्ट्रीय प्रणाली पर लागू करते हैं, जहाँ एक वैश्विक संप्रभु की अनुपस्थिति राज्यों के बीच एक समान "प्रकृति की अवस्था" की ओर ले जाती है।

- ई.एच. कार (1892-1982): ब्रिटिश इतिहासकार और अंतर्राष्ट्रीय संबंध सिद्धांतकार, द ट्वेंटी इयर्स' क्राइसिस *(1919-1939)* के लेखक। द्वितीय विश्व युद्ध से ठीक पहले प्रकाशित, यह पुस्तक अंतर-युद्ध आदर्शवाद की एक मूलभूत आलोचना है। कार ने तर्क दिया कि आदर्शवादी काल्पनिक और भोले थे, जो अंतर्राष्ट्रीय राजनीति में शक्ति और राष्ट्रीय हित की केंद्रीय भूमिका को पहचानने में विफल रहे। उन्होंने "काल्पनिकवाद" (नैतिकता और सहयोग पर ध्यान केंद्रित) और "यथार्थवाद" (शक्ति और संघर्ष पर ध्यान केंद्रित) के बीच अंतर किया, यह दावा करते हुए कि एक ठोस सिद्धांत को दोनों को संश्लेषित करना चाहिए।
- हंस जे. मोर्गेंथाऊ (1904-1980): जर्मन-अमेरिकी राजनीतिक वैज्ञानिक, जिन्हें सबसे प्रभावशाली शास्त्रीय यथार्थवादियों में से एक माना जाता है। उनका महत्वपूर्ण कार्य, पॉलिटिक्स अमंग नेशन्स: द स्ट्रगल फॉर पावर एंड पीस (1948), शास्त्रीय यथार्थवादी सिद्धांत को व्यवस्थित किया। मोर्गेंथाऊ ने तर्क दिया कि अंतर्राष्ट्रीय राजनीति, सभी राजनीति की तरह, मानव स्वभाव में निहित शक्ति के लिए एक संघर्ष है। उन्होंने राजनीतिक यथार्थवाद के छह सिद्धांतों का प्रस्ताव किया, जिसमें मानव स्वभाव से प्राप्त वस्तुनिष्ठ कानूनों, शक्ति के रूप में परिभाषित हित की अवधारणा, राजनीतिक कार्रवाई का नैतिक महत्व और राजनीतिक क्षेत्र की स्वायत्तता पर जोर दिया गया।

अवधारणाएँ / उप-विषय:

- शास्त्रीय यथार्थवाद: मानव स्वभाव पर ध्यान केंद्रित।
    - अवधारणात्मक समझ: जैसा कि ऊपर चर्चा की गई है, शास्त्रीय यथार्थवाद यह मानता है कि शक्ति के लिए मूलभूत प्रेरणा और अंतर्राष्ट्रीय संबंधों में संघर्ष की अनिवार्यता एक त्रुटिपूर्ण, स्व-हितैषी और शक्ति-खोजने वाले मानव स्वभाव से उत्पन्न होती है। राज्य, व्यक्तियों के संग्रह होने के नाते, प्रभुत्व की इस अंतर्निहित मानवीय इच्छा को दर्शाते हैं।
    - नव-यथार्थवाद से अंतर: नव-यथार्थवाद के विपरीत, जो मुख्य रूप से अंतर्राष्ट्रीय प्रणाली की संरचना (अराजकता) के लिए राज्य के व्यवहार को जिम्मेदार ठहराता है, शास्त्रीय यथार्थवाद मानव स्वभाव को शक्ति की राजनीति की अपनी व्याख्या के मूल में रखता है।
- शक्ति संतुलन सिद्धांत (Balance of Power Theory):
    - अवधारणात्मक समझ: यह सिद्धांत बताता है कि राष्ट्रीय सुरक्षा तब बढ़ती है जब सैन्य क्षमताओं को इस तरह से वितरित किया जाता है कि कोई भी राज्य दूसरों पर हावी होने के लिए पर्याप्त मजबूत न हो। राज्य, प्रभुत्व के डर से, स्वाभाविक रूप से किसी भी राज्य या गठबंधन के खिलाफ संतुलन बनाने की कोशिश करेंगे जो वर्चस्व के लिए खतरा है, या तो आंतरिक निर्माण (जैसे, सैन्य शक्ति बढ़ाना) या बाहरी गठबंधन (जैसे, अन्य राज्यों के साथ गठबंधन बनाना) के माध्यम से।
    - तंत्र: जब एक राज्य बहुत अधिक शक्ति प्राप्त करता है, तो अन्य राज्य उस राज्य को वर्चस्व प्राप्त करने से रोकने के लिए प्रति-संतुलन गठबंधन बनाएंगे। यह एक सापेक्ष संतुलन बनाता है जो यथार्थवादियों के अनुसार, स्थिरता बनाए रखने और युद्ध को रोकने में मदद करता है, क्योंकि कोई भी राज्य आक्रामकता शुरू करने के लिए पर्याप्त आत्मविश्वास महसूस नहीं करता है।
    - ऐतिहासिक संदर्भ: ऐतिहासिक रूप से, नेपोलियन युद्धों के बाद यूरोप का कॉन्सर्ट (1815-1914) को अक्सर एक अपेक्षाकृत सफल शक्ति संतुलन प्रणाली के उदाहरण के रूप में उद्धृत किया जाता है। शीत युद्ध (1947-1991) अमेरिका और सोवियत संघ के बीच द्विध्रुवीय प्रणाली एक और उदाहरण है, जहाँ आपसी प्रतिरोध ने सीधे बड़े पैमाने पर संघर्ष को रोका।
    - आलोचनाएँ/बहसें: आलोचकों का तर्क है कि शक्ति संतुलन स्वाभाविक रूप से अस्थिर है, अक्सर हथियारों की दौड़ और अंततः युद्ध की ओर ले जाता है (जैसा कि प्रथम विश्व युद्ध में देखा गया था)। यह राज्यों पर खतरों को सटीक रूप से समझने और तर्कसंगत रूप से कार्य करने पर भी निर्भर करता है, जो हमेशा ऐसा नहीं होता है।
- राष्ट्रीय हित (National Interest):
    - अवधारणात्मक समझ: यथार्थवाद में एक केंद्रीय अवधारणा, राष्ट्रीय हित अंतर्राष्ट्रीय प्रणाली में एक राज्य के लक्ष्यों और उद्देश्यों को संदर्भित करता है। यथार्थवादी तर्क देते हैं कि राज्य अपने राष्ट्रीय हित का सबसे ऊपर पीछा करते हैं, जिसे मुख्य रूप से शक्ति, सुरक्षा और अस्तित्व के संदर्भ में परिभाषित

किया जाता है। इसे अक्सर राज्य के व्यवहार के लिए एक निरंतर और मार्गदर्शक सिद्धांत के रूप में देखा जाता है, जो वैचारिक मतभेदों या घरेलू राजनीतिक परिवर्तनों से परे है।
    - मोर्गेंथाऊ का दृष्टिकोण: हंस मोर्गेंथाऊ ने प्रसिद्ध रूप से कहा कि "हित को शक्ति के संदर्भ में परिभाषित किया गया है।" इसका मतलब है कि कोई भी नीति जो एक राज्य अपनाता है, उसका अंतिम लक्ष्य शक्ति प्राप्त करना, बनाए रखना या प्रदर्शित करना है।
    - उदाहरण: एक राज्य परमाणु हथियार विकसित कर सकता है, आर्थिक संरक्षणवाद में संलग्न हो सकता है, या एक सैन्य गठबंधन बना सकता है, ये सभी अपने कथित राष्ट्रीय हित को आगे बढ़ाने के उद्देश्य से हैं।
- सुरक्षा दुविधा (Security Dilemma):
    - अवधारणात्मक समझ: अंतर्राष्ट्रीय संबंधों में एक विरोधाभास जहाँ एक राज्य द्वारा अपनी सुरक्षा बढ़ाने के प्रयास (जैसे, सैन्य शक्ति बढ़ाकर, गठबंधन बनाकर) को अन्य राज्यों द्वारा धमकी के रूप में माना जाता है। ये अन्य राज्य तब अपनी सुरक्षा बढ़ाकर जवाब देते हैं, जिससे हथियारों की दौड़ और बढ़े हुए तनाव का एक सर्पिल होता है, भले ही किसी भी राज्य का शुरू में संघर्ष को भड़काने का इरादा न हो। यह परिणाम सभी राज्यों को पहले की तुलना में कम सुरक्षित बनाता है।
    - प्रभाव: सुरक्षा दुविधा अराजकता के तहत सहयोग की अंतर्निहित चुनौतियों पर प्रकाश डालती है और यह समझाने में मदद करती है कि संघर्ष उन राज्यों के बीच भी क्यों उत्पन्न हो सकता है जो स्वाभाविक रूप से आक्रामक नहीं हैं।
    - उदाहरण: शीत युद्ध के दौरान अमेरिका और सोवियत संघ के बीच हथियारों की दौड़, या विभिन्न क्षेत्रों में वर्तमान परमाणु प्रसार संबंधी चिंताएं, सुरक्षा दुविधा के लेंस के माध्यम से समझी जा सकती हैं। प्रत्येक राज्य द्वारा खुद को सुरक्षित करने का प्रयास दूसरों द्वारा खतरा के रूप में देखा जाता है, जिससे हथियारों का लगातार निर्माण होता है।

4. नव-यथार्थवाद (संरचनात्मक यथार्थवाद)

नव-यथार्थवाद, जिसे संरचनात्मक यथार्थवाद भी कहा जाता है, 1970 के दशक के अंत में शास्त्रीय यथार्थवाद की कथित सीमाओं और सामाजिक विज्ञानों में व्यवहारवाद के उदय के जवाब में उभरा। यह मानव स्वभाव या आंतरिक राज्य विशेषताओं के बजाय अंतर्राष्ट्रीय प्रणाली की संरचना पर ध्यान केंद्रित करके अंतर्राष्ट्रीय राजनीति के लिए एक अधिक वैज्ञानिक और संक्षिप्त (सरल और कुशल) व्याख्या प्रदान करने का प्रयास करता है।

मुख्य सिद्धांत:

नव-यथार्थवाद के केंद्रीय सिद्धांत शास्त्रीय यथार्थवाद से भिन्न हैं, क्योंकि यह राज्य के व्यवहार के लिए प्राथमिक व्याख्यात्मक चर को बदल देता है:

- मानव स्वभाव से अंतर्राष्ट्रीय प्रणाली की संरचना की ओर ध्यान केंद्रित करना: शास्त्रीय यथार्थवादियों के विपरीत, जिन्होंने शक्ति की राजनीति को मानव स्वभाव में निहित दोष (जैसे, मॉर्गेंथाऊ की "शक्ति की लालसा") से जोड़ा, नव-यथार्थवादी तर्क देते हैं कि अंतर्राष्ट्रीय प्रणाली की अराजक संरचना ही राज्यों को कुछ खास तरीकों से व्यवहार करने के लिए मजबूर करती है। राज्य तर्कसंगत अभिनेता हैं जो प्रणाली द्वारा प्रस्तुत बाहरी बाधाओं और अवसरों पर प्रतिक्रिया करते हैं।
- अराजक संरचना राज्य के व्यवहार का प्राथमिक निर्धारक है: अंतर्राष्ट्रीय प्रणाली में एक केंद्रीय प्राधिकरण (अराजकता) की अनुपस्थिति राज्य के व्यवहार का मौलिक चालक है। क्योंकि कोई व्यापक प्रवर्तक नहीं है, राज्यों को अपने अस्तित्व और सुरक्षा को प्राथमिकता देनी चाहिए। यह प्रणालीगत स्थिति राज्यों को आत्म-सहायता में संलग्न होने के लिए मजबूर करती है और सहयोग को कठिन और अक्सर अस्थायी बनाती है।
- क्षमताओं (शक्ति) का वितरण प्रणाली को आकार देता है: जबकि अराजकता अंतर्राष्ट्रीय प्रणाली की एक स्थिर विशेषता है, प्रमुख राज्यों के बीच शक्ति (या क्षमताओं) का वितरण एक चर है जो राज्य की बातचीत और परिणामों को मौलिक रूप से आकार देता है। यह वितरण प्रणाली की "ध्रुवीयता" (जैसे, एकध्रुवीय, द्विध्रुवीय, बहुध्रुवीय) को निर्धारित करता है और शांति या युद्ध की संभावना, गठबंधन के पैटर्न और अन्य अंतर्राष्ट्रीय घटनाओं को प्रभावित करता है। क्षमताओं का मुख्य रूप से सैन्य और आर्थिक शक्ति से तात्पर्य है।

प्रमुख विचारक:

- केनेथ वॉल्ट्ज़ (1924-2013): नव-यथार्थवाद के संस्थापक, उनकी महत्वपूर्ण कृति थ्योरी ऑफ इंटरनेशनल पॉलिटिक्स (1979) ने संरचनात्मक यथार्थवाद के मूल सिद्धांतों को प्रस्तुत किया। वॉल्ट्ज़ ने तर्क दिया कि अंतर्राष्ट्रीय प्रणाली उसके संगठनात्मक सिद्धांत (अराजकता) और उसकी इकाइयों (राज्यों) के बीच क्षमताओं के वितरण द्वारा परिभाषित होती है। उन्होंने माना कि अराजकता राज्यों को सुरक्षा प्राप्त करने के लिए मजबूर करती है, जिससे एक प्रतिस्पर्धी माहौल बनता है जहाँ राज्य एक-दूसरे के खिलाफ संतुलन बनाते हैं। वॉल्ट्ज़ को अक्सर रक्षात्मक यथार्थवाद से जोड़ा जाता है, यह तर्क देते हुए कि राज्य सुरक्षित रहने के लिए पर्याप्त शक्ति चाहते हैं, न कि बिना सीमा के शक्ति को अधिकतम करने के लिए।
- जॉन मियरशाइमर (1947-वर्तमान): एक प्रमुख समकालीन नव-यथार्थवादी, जो आक्रामक यथार्थवाद के अपने सिद्धांत के लिए जाने जाते हैं, जिसका सबसे उल्लेखनीय रूप से द ट्रेजेडी ऑफ ग्रेट पावर पॉलिटिक्स (2001) में उल्लेख किया गया है। मियरशाइमर अंतर्राष्ट्रीय प्रणाली की अराजक प्रकृति पर वॉल्ट्ज़ से सहमत हैं, लेकिन वह तर्क देते हैं कि अराजकता महान शक्तियों को केवल सुरक्षा की तलाश करने के लिए नहीं, बल्कि अपनी सापेक्ष शक्ति को अधिकतम करने के लिए मजबूर करती है, जिसमें आधिपत्य (प्रणाली पर प्रभुत्व) उनका अंतिम लक्ष्य होता है। उनका मानना है कि राज्य लगातार प्रतिद्वंद्वियों की कीमत पर शक्ति प्राप्त करने के अवसरों की तलाश में रहते हैं, क्योंकि यह उनके अस्तित्व को सुनिश्चित करने का सबसे अच्छा तरीका है।

उप-विषय:

- आक्रामक बनाम रक्षात्मक यथार्थवाद: यह नव-यथार्थवाद के भीतर एक प्रमुख आंतरिक बहस है।
  - रक्षात्मक यथार्थवाद (वॉल्ट्ज़): सुरक्षा को अधिकतम करने वाले राज्य।
    - अवधारणात्मक समझ: समर्थक (जैसे वॉल्ट्ज़) तर्क देते हैं कि अराजक अंतर्राष्ट्रीय प्रणाली राज्यों को शक्ति के मौजूदा संतुलन को बनाए रखने के लिए प्रोत्साहित करती है बजाय इसे बिगाड़ने की कोशिश करने के। राज्य अपनी सुरक्षा और अस्तित्व सुनिश्चित करने के लिए पर्याप्त शक्ति का लक्ष्य रखते हैं। आक्रामक विस्तार को प्रति-उत्पादक के रूप में देखा जाता है, जिससे अन्य राज्यों द्वारा संतुलन बनता है और अंततः हमलावर की सुरक्षा कम हो जाती है। रक्षात्मक यथार्थवादी सुझाव देते हैं कि राज्य अक्सर अपनी वर्तमान स्थिति से संतुष्ट होते हैं और केवल इसकी रक्षा करना चाहते हैं।
    - नीतिगत निहितार्थ: मध्यम विदेश नीतियों, यथास्थिति और अत्यधिक शक्तिशाली राज्यों के खिलाफ संतुलन की वकालत करता है।
  - आक्रामक यथार्थवाद (मियरशाइमर): शक्ति को अधिकतम करने वाले राज्य।
    - अवधारणात्मक समझ: समर्थक (जैसे मियरशाइमर) तर्क देते हैं कि अराजक प्रणाली राज्यों को अपनी सापेक्ष शक्ति को अधिकतम करने के लिए मजबूर करती है, न कि केवल इसे बनाए रखने के लिए। वे तर्क देते हैं कि सच्ची सुरक्षा केवल आधिपत्य के माध्यम से प्राप्त की जा सकती है। राज्य स्वाभाविक रूप से एक-दूसरे से डरते हैं और शक्ति प्राप्त करने के अवसरों की लगातार तलाश करते हैं, भले ही इसका मतलब आक्रामक रूप से कार्य करना हो, क्योंकि प्रणाली बहुत खतरनाक है। "पर्याप्त" शक्ति जैसी कोई चीज नहीं है; अधिक हमेशा बेहतर होता है।
    - नीतिगत निहितार्थ: आक्रामक विदेश नीतियों, क्षेत्रीय (या वैश्विक) आधिपत्य की तलाश और प्रतिद्वंद्वियों को कमजोर करने के अवसरों का लाभ उठाने की वकालत करता है।
- ध्रुवीयता (Polarity): एकध्रुवीय, द्विध्रुवीय और बहुध्रुवीय प्रणालियाँ।
  - अवधारणात्मक समझ: ध्रुवीयता अंतर्राष्ट्रीय प्रणाली में प्रमुख शक्तियों (या ध्रुवों) की संख्या को संदर्भित करती है। नव-यथार्थवादी, विशेष रूप से वॉल्ट्ज़, तर्क देते हैं कि ध्रुवीयता प्रणाली की स्थिरता को महत्वपूर्ण रूप से प्रभावित करती है।
    - एकध्रुवीय प्रणाली: एक प्रमुख महान शक्ति (वर्चस्ववादी)। यथार्थवादी इसकी स्थिरता पर बहस करते हैं; कुछ तर्क देते हैं कि वर्चस्ववादी शांति लागू कर सकता है, अन्य कि यह कमजोर राज्यों द्वारा संतुलन को आमंत्रित करता है। (उदाहरण के लिए, शीत युद्ध के बाद का युग जिसमें संयुक्त राज्य अमेरिका एकमात्र महाशक्ति था)।

        - द्विध्रुवीय प्रणाली: दो प्रमुख महान शक्तियाँ। वॉल्ट्ज़ तर्क देते हैं कि यह सबसे स्थिर प्रणाली है क्योंकि बातचीत सरल होती है, गलत गणना की संभावना कम होती है (प्रत्येक महाशक्ति सीधे दूसरे की निगरानी करती है), और संतुलन स्पष्ट होता है। (उदाहरण के लिए, शीत युद्ध का युग, 1947-1991, संयुक्त राज्य अमेरिका और सोवियत संघ के बीच)।
        - बहुध्रुवीय प्रणाली: तीन या अधिक प्रमुख महान शक्तियाँ। वॉल्ट्ज़ तर्क देते हैं कि यह सबसे कम स्थिर प्रणाली है क्योंकि अनिश्चितता बढ़ जाती है, गठबंधन के पैटर्न जटिल होते हैं, और गलत गणना की उच्च संभावना होती है, क्योंकि राज्यों के पास अधिक संभावित भागीदार और दुश्मन होते हैं। (उदाहरण के लिए, प्रथम विश्व युद्ध से पहले यूरोपीय शक्ति संतुलन)।
    - प्रासंगिकता: ध्रुवीयता की अवधारणा प्रणालीगत स्थिरता को समझने और संघर्ष और सहयोग के पैटर्न की भविष्यवाणी करने के लिए महत्वपूर्ण है।
- सापेक्ष लाभ बनाम निरपेक्ष लाभ (Relative Gains vs. Absolute Gains):
    - अवधारणात्मक समझ: यह अवधारणा सहयोग के संबंध में यथार्थवादियों (विशेष रूप से नव-यथार्थवादियों) और उदारवादियों के बीच एक महत्वपूर्ण अंतर को उजागर करती है।
        - सापेक्ष लाभ: यथार्थवादी सहयोग से प्राप्त सापेक्ष लाभों पर राज्यों के प्राथमिक सरोकार पर जोर देते हैं। वे केवल "क्या मुझे लाभ होगा?" नहीं पूछते हैं, बल्कि "क्या मुझे अपने संभावित प्रतिद्वंद्वी से अधिक लाभ होगा, या मेरे प्रतिद्वंद्वी को मुझसे अधिक लाभ होगा?" यदि कोई राज्य यह मानता है कि एक प्रतिद्वंद्वी को सहयोग से अधिक लाभ होगा, भले ही उसे भी पूर्ण रूप से लाभ हो, तो वह इस डर से सहयोग करने से इनकार कर सकता है कि प्रतिद्वंद्वी की बढ़ी हुई शक्ति का उपयोग भविष्य में उसके खिलाफ किया जा सकता है। यह सहयोग को कठिन बनाता है और अक्सर शक्ति के पूर्व-मौजूदा संतुलन की आवश्यकता होती है।
        - निरपेक्ष लाभ: उदारवादी, दूसरी ओर, तर्क देते हैं कि राज्य निरपेक्ष लाभों से अधिक चिंतित होते हैं, जिसका अर्थ है कि वे तब तक सहयोग करेंगे जब तक उन्हें कुछ लाभ होता है, भले ही उनके भागीदारों को अधिक या कम लाभ हो। उनका मानना है कि आपसी लाभ सहयोग के लिए पर्याप्त प्रोत्साहन हैं।
    - प्रासंगिकता: यह अंतर बताता है कि यथार्थवादी उदारवादियों की तुलना में अंतर्राष्ट्रीय सहयोग की सीमा और स्थायित्व के बारे में अधिक संशयवादी क्यों हैं।

आलोचनाएँ**:**

नव-यथार्थवाद, अपने महत्वपूर्ण प्रभाव के बावजूद, कई आलोचनाओं का सामना कर चुका है:

- अनावश्यक सरलीकरण (Reductionism): आलोचकों का तर्क है कि नव-यथार्थवाद अनावश्यक रूप से सरल है क्योंकि यह अंतर्राष्ट्रीय राजनीति की जटिल वास्तविकता को लगभग विशेष रूप से विश्लेषण के प्रणालीगत स्तर (अराजकता और क्षमताओं के वितरण) पर ध्यान केंद्रित करके सरल करता है। यह अक्सर अन्य कारकों के महत्व को अनदेखा करता है या कम आंकता है।
- घरेलू कारकों की उपेक्षा: एक बड़ी आलोचना यह है कि नव-यथार्थवाद विदेश नीति व्यवहार की व्याख्या में आंतरिक राज्य विशेषताओं (जैसे, शासन का प्रकार, घरेलू राजनीति, जनमत, नेतृत्व का व्यक्तित्व, नौकरशाही प्रक्रियाएं) को काफी हद तक अनदेखा करता है। जबकि वॉल्ट्ज़ का तर्क है कि उनका सिद्धांत अंतर्राष्ट्रीय राजनीति के परिणामों और पैटर्न की व्याख्या करता है न कि विशिष्ट विदेश नीति विकल्पों की, आलोचक मानते हैं कि पूर्ण समझ के लिए घरेलू कारक महत्वपूर्ण हैं।
- विशिष्ट विदेश नीति विकल्पों की व्याख्या करने में असमर्थता: अपने प्रणालीगत ध्यान के कारण, नव-यथार्थवाद यह समझाने के लिए संघर्ष करता है कि समान प्रणालीगत दबावों का सामना करने वाले विभिन्न राज्य अलग-अलग विदेश नीति विकल्प क्यों चुन सकते हैं।
- अराजकता का स्थिर दृष्टिकोण: कुछ रचनावादी और महत्वपूर्ण सिद्धांतकार तर्क देते हैं कि नव-यथार्थवाद अराजकता को एक निश्चित और अपरिवर्तनीय स्थिति के रूप में मानता है, जबकि उनका मानना है कि अराजकता सामाजिक रूप से निर्मित होती है और राज्य की बातचीत के माध्यम से विकसित हो सकती है।

- "शक्ति" को परिभाषित करने और मापने में कठिनाई: आलोचक बताते हैं कि "शक्ति" एक जटिल और बहुआयामी अवधारणा है जिसे सटीक रूप से परिभाषित करना और मापना मुश्किल है, जिससे नव-यथार्थवादी सिद्धांतों को लागू करना चुनौतीपूर्ण हो जाता है।

5. नव-उदारवाद (नव-उदार संस्थावाद)

नव-उदारवाद, जिसे अंतर्राष्ट्रीय संबंधों में विशेष रूप से नव-उदार संस्थावाद के रूप में जाना जाता है, 1980 के दशक में नव-यथार्थवाद के जवाब में उभरा। यथार्थवाद के कुछ मुख्य सिद्धांतों, विशेष रूप से अंतर्राष्ट्रीय प्रणाली की अराजक प्रकृति को स्वीकार करते हुए, नव-उदारवादी अंतर्राष्ट्रीय सहयोग की संभावना और सीमा पर एक अधिक आशावादी दृष्टिकोण प्रस्तुत करते हैं। वे तर्क देते हैं कि अंतर्राष्ट्रीय संस्थान सहयोग को सुगम बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं, जिससे इससे जुड़ी लागतें और जोखिम कम हो जाते हैं।

मुख्य सिद्धांत:

नव-उदार संस्थावाद उदारवादी विचारों पर आधारित है, लेकिन यथार्थवाद से अंतर्दृष्टि (insights) को भी शामिल करता है:

- आदर्शवाद से विकास; अराजकता के यथार्थवादी आधार को स्वीकार करता है लेकिन तर्क देता है कि सहयोग संभव है: नव-उदारवाद पारंपरिक उदारवाद का एक परिष्कृत (refined) संस्करण है। शास्त्रीय आदर्शवादियों के विपरीत, नव-उदारवादी इस यथार्थवादी आधार को स्वीकार करते हैं कि अंतर्राष्ट्रीय प्रणाली अराजक है (अर्थात, एक केंद्रीय प्राधिकरण की कमी है)। हालांकि, वे दृढ़ता से तर्क देते हैं कि अराजकता के बावजूद, सार्थक और स्थायी अंतर्राष्ट्रीय सहयोग न केवल संभव है बल्कि राज्यों के लिए व्यापक और फायदेमंद भी है।
- सहयोग को सुगम बनाने में अंतर्राष्ट्रीय संस्थानों की भूमिका पर ध्यान केंद्रित: यह नव-उदार संस्थावाद का आधारशिला (cornerstone) है। वे तर्क देते हैं कि अंतर्राष्ट्रीय संस्थान (संयुक्त राष्ट्र, डब्ल्यूटीओ जैसे औपचारिक संगठन, या हथियार नियंत्रण संधियों जैसे अनौपचारिक शासन) अराजकता के नकारात्मक प्रभावों को कम करते हैं। संस्थान सहयोग के लिए ढाँचे प्रदान करते हैं:
    - लेन-देन की लागत कम करना: राज्यों के लिए बातचीत करना और समझौते करना आसान और सस्ता बनाना।
    - जानकारी प्रदान करना: राज्य के इरादों और कार्यों को अधिक पारदर्शी बनाकर अनिश्चितता और गलतफहमी को कम करना।
    - मानदंड और नियम बनाना: व्यवहार के लिए साझा अपेक्षाएं स्थापित करना, जिससे विचलन अधिक महंगा हो जाता है।
    - अनुपालन की निगरानी: राज्यों को धोखाधड़ी का पता लगाने और समझौतों को लागू करने में मदद करना, जिससे विश्वास का निर्माण होता है।
    - पुनरावृत्ति (iteration) को सुविधाजनक बनाना: बार-बार बातचीत के अवसर पैदा करना, जो अल्पकालिक दल-बदल पर दीर्घकालिक सहयोग को प्रोत्साहित करता है।
- निरपेक्ष लाभ और आपसी हितों पर जोर: यथार्थवादियों के विपरीत, जो सापेक्ष लाभों (प्रतिद्वंद्वियों से अधिक लाभ प्राप्त करना) को प्राथमिकता देते हैं, नव-उदारवादी तर्क देते हैं कि राज्य मुख्य रूप से निरपेक्ष लाभों से संबंधित हैं। इसका मतलब है कि राज्य सहयोग करेंगे यदि वे अपने लिए सकारात्मक लाभ प्राप्त कर सकते हैं, भले ही अन्य राज्यों को अधिक या कम लाभ हो। उनका मानना है कि राज्यों के अक्सर सामान्य समस्याओं (जैसे, जलवायु परिवर्तन, व्यापार, वित्तीय स्थिरता) को संबोधित करने में आपसी हित होते हैं जो प्रतिस्पर्धी शक्ति की राजनीति से परे होते हैं।

प्रमुख विचारक / समर्थक:

- रॉबर्ट कोहेन (1941-वर्तमान): नव-उदार संस्थावाद में सबसे प्रभावशाली व्यक्ति माने जाते हैं। उनका मूलभूत कार्य, आफ्टर हेजेमनी: कोऑपरेशन एंड डिसकॉर्ड इन द वर्ल्ड पॉलिटिकल इकोनॉमी (1984), ने तर्क दिया कि

अमेरिकी आधिपत्य (जिसे कुछ यथार्थवादी सहयोग के लिए आवश्यक मानते थे) के पतन के बाद भी, अंतर्राष्ट्रीय संस्थानों और शासनों की स्थायी भूमिका के कारण अंतर्राष्ट्रीय सहयोग बना रहा। उन्होंने सिद्धांत दिया कि कैसे संस्थान बार-बार बातचीत की सुविधा प्रदान करके और जानकारी प्रदान करके राज्यों को "कैदी की दुविधा" को दूर करने में मदद करते हैं।

- जोसेफ नाय (1937-वर्तमान): नव-उदारवादी विचारों के एक प्रमुख प्रस्तावक, जो "सॉफ्ट पावर" और "जटिल अंतर-निर्भरता" (रॉबर्ट कोहेन के साथ) की अवधारणाओं को विकसित करने के लिए जाने जाते हैं। नाय इस बात पर जोर देते हैं कि अंतर्राष्ट्रीय संबंधों में शक्ति अब केवल सैन्य नहीं है; "सॉफ्ट पावर" (आकर्षण और सह-विकल्प के माध्यम से राजी करने की क्षमता) तेजी से महत्वपूर्ण हो रही है। जटिल अंतर-निर्भरता पर उनका काम बातचीत के कई चैनलों और उन्नत औद्योगिक लोकतंत्रों के बीच सैन्य बल की घटती उपयोगिता पर प्रकाश डालता है।

अवधारणाएँ / उप-विषय:

- जटिल अंतर-निर्भरता (Complex Interdependence):
  - अवधारणात्मक समझ: रॉबर्ट कोहेन और जोसेफ नाय द्वारा विकसित एक अवधारणा, जो इस पारंपरिक यथार्थवादी दृष्टिकोण को चुनौती देती है कि राज्य केवल सुरक्षा मुद्दों और सैन्य शक्ति के माध्यम से जुड़े हुए हैं। जटिल अंतर-निर्भरता यह तर्क देती है कि राज्य और उनके भाग्य बातचीत के कई चैनलों (जैसे, आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, पर्यावरणीय) के माध्यम से अविभाज्य रूप से जुड़े हुए हैं, जिससे ऐसी स्थिति उत्पन्न होती है जहाँ:
    - कई चैनल समाजों को जोड़ते हैं: केवल राज्य-से-राज्य संबंध ही नहीं, बल्कि अंतर-सरकारी (सरकारी उप-इकाइयों के बीच) और अंतरराष्ट्रीय (गैर-राज्य अभिनेताओं के बीच) भी।
    - मुद्दों के बीच पदानुक्रम की अनुपस्थिति: सैन्य सुरक्षा हमेशा प्रमुख मुद्दा नहीं होती है; आर्थिक, सामाजिक और पर्यावरणीय मुद्दे समान या अधिक महत्वपूर्ण हो सकते हैं।
    - सैन्य बल की छोटी भूमिका: जटिल रूप से अंतर-निर्भर राज्यों के बीच सैन्य बल कम प्रभावी और कम बार उपयोग किया जाता है।
  - प्रासंगिकता: यह बताता है कि ऐसे विश्व में संघर्ष की लागत अधिक होती है और सहयोग के लाभ अधिक होते हैं, जिससे अत्यधिक अंतर-निर्भर राज्यों के बीच युद्ध की संभावना कम हो जाती है।
- संस्थावाद (Institutionalism): अंतर्राष्ट्रीय संस्थानों/शासन (संयुक्त राष्ट्र, डब्ल्यूटीओ) की भूमिका।
  - अवधारणात्मक समझ: नव-उदारवाद के भीतर संस्थावाद इस बात के अध्ययन को संदर्भित करता है कि कैसे औपचारिक अंतर्राष्ट्रीय संगठन (जैसे संयुक्त राष्ट्र, विश्व व्यापार संगठन, यूरोपीय संघ) और अनौपचारिक अंतर्राष्ट्रीय शासन (सिद्धांतों, मानदंडों, नियमों और निर्णय लेने की प्रक्रियाओं का एक समूह जिसके चारों ओर अंतर्राष्ट्रीय संबंधों के किसी दिए गए क्षेत्र में अभिनेताओं की अपेक्षाएं परिवर्तित होती हैं) सहयोग को सुगम बनाते हैं। ये संस्थान एक ढाँचा प्रदान करते हैं जो अंतर्राष्ट्रीय प्रणाली की अराजक प्रवृत्तियों को कम करता है।
  - संयुक्त राष्ट्र की भूमिका: संयुक्त राष्ट्र (स्थापना 1945) एक अंतर्राष्ट्रीय संस्थान का एक प्रमुख उदाहरण है। नव-उदारवादी तर्क देते हैं कि संयुक्त राष्ट्र, अपनी खामियों के बावजूद, कूटनीति, सामूहिक सुरक्षा प्रयासों (हालांकि यथार्थवादी शक्ति की राजनीति द्वारा सीमित), मानवीय सहायता, और जलवायु परिवर्तन और गरीबी जैसी वैश्विक चुनौतियों का समाधान करने के लिए एक मंच प्रदान करता है।
  - डब्ल्यूटीओ की भूमिका: विश्व व्यापार संगठन (डब्ल्यूटीओ, 1995 में स्थापित, गेट 1948 का उत्तराधिकारी) यह उदाहरण देता है कि कैसे संस्थान आर्थिक संबंधों में सहयोग को बढ़ावा दे सकते हैं। यह व्यापार वार्ताओं, विवाद समाधान के लिए एक ढाँचा प्रदान करता है, और वैश्विक व्यापार के लिए नियम स्थापित करता है, जिससे अनिश्चितता कम होती है और इसके सदस्य राज्यों के बीच आर्थिक अंतर-निर्भरता को बढ़ावा मिलता है।
- कैदी की दुविधा और गेम थ्योरी (The Prisoner's Dilemma and Game Theory):
  - अवधारणात्मक समझ: नव-उदारवादी अक्सर गेम थ्योरी, विशेष रूप से कैदी की दुविधा का उपयोग करते हैं, जो एक अराजक वातावरण में सहयोग की चुनौतियों और कैसे संस्थान इन चुनौतियों को दूर करने में मदद कर सकते हैं, यह दर्शाने के लिए।

        - कैदी की दुविधा: एक क्लासिक गेम थ्योरी परिदृश्य जहाँ दो तर्कसंगत व्यक्ति सहयोग नहीं कर सकते हैं, भले ही ऐसा करना उनके सर्वोत्तम हित में प्रतीत होता हो। एक अंतर्राष्ट्रीय संदर्भ में, राज्य "दल-बदल" (जैसे, एक समझौते पर धोखा देना) चुन सकते हैं क्योंकि उन्हें डर है कि दूसरा राज्य दल-बदल करेगा, भले ही आपसी सहयोग से दोनों के लिए बेहतर परिणाम मिलेंगे।
        - नव-उदारवादी समाधान: नव-उदारवादी तर्क देते हैं कि बार-बार बातचीत ("पुनरावृत्ति") और अंतर्राष्ट्रीय संस्थानों की उपस्थिति कैदी की दुविधा की भुगतान संरचना को बदल सकती है। संस्थान जानकारी प्रदान करते हैं, व्यवहार की निगरानी करते हैं, और दल-बदल के लिए परिणाम बनाते हैं, जिससे धोखे की लागत और दीर्घकालिक सहयोग के लाभों को बढ़ाकर सहयोग को एक अधिक तर्कसंगत विकल्प बनाया जा सकता है।
    - प्रासंगिकता: यह समझाने में मदद करता है कि कैसे तर्कसंगत स्व-हितैषी राज्य अभी भी अराजकता के तहत सहयोग प्राप्त कर सकते हैं।
- लोकतांत्रिक शांति सिद्धांत (नव-उदारवादी व्याख्या)।
    - अवधारणात्मक समझ: शास्त्रीय उदारवाद में निहित होने के बावजूद, नव-उदारवाद लोकतांत्रिक शांति सिद्धांत को अपनाता है और उसका विस्तार करता है। नव-उदारवादी तर्क देते हैं कि लोकतंत्र एक-दूसरे के प्रति अधिक शांतिपूर्ण होते हैं, साझा उदारवादी मूल्यों, पारदर्शी राजनीतिक प्रक्रियाओं और संस्थागत बाधाओं के कारण, जो नेताओं के लिए सार्वजनिक समर्थन के बिना युद्ध छेड़ना कठिन बनाते हैं। इसके अलावा, उदारवादी लोकतंत्रों द्वारा पोषित आर्थिक अंतर-निर्भरता संघर्ष के लिए प्रोत्साहन को कम करती है।
    - संस्थानों पर जोर: नव-उदारवादी इस बात पर प्रकाश डालते हैं कि लोकतंत्र अंतर्राष्ट्रीय संस्थानों और कानूनों का निर्माण और पालन करते हैं, जिससे उनके बीच शांतिपूर्ण संबंध और मजबूत होते हैं।
- आधिपत्यवादी स्थिरता सिद्धांत (नव-उदारवादी व्याख्या)।
    - अवधारणात्मक समझ: आधिपत्यवादी स्थिरता सिद्धांत (एचएसटी) मूल रूप से यथार्थवादियों (जैसे, चार्ल्स किंडलबरगर) द्वारा प्रतिपादित किया गया था, यह तर्क देता है कि एक एकल, शक्तिशाली प्रमुख राज्य (एक आधिपत्य) का अस्तित्व सामूहिक वस्तुओं (जैसे मुक्त व्यापार, स्थिर मुद्रा, सुरक्षा) के प्रावधान और अंतर्राष्ट्रीय प्रणाली की स्थिरता के लिए आवश्यक है। आधिपत्य के पास अंतर्राष्ट्रीय व्यवस्था को बनाए रखने की क्षमता और रुचि दोनों होती है।
    - नव-उदारवादी व्याख्या: नव-उदारवादी संस्थानों और शासनों को पहली बार स्थापित करने में एक आधिपत्य की भूमिका को स्वीकार करते हैं (उदाहरण के लिए, द्वितीय विश्व युद्ध के बाद ब्रेटन वुड्स संस्थानों का निर्माण करने वाला अमेरिका)। हालांकि, वे यथार्थवादियों से अलग होते हैं यह तर्क देते हुए कि ये संस्थान आधिपत्य की शक्ति घटने के बाद भी बने रह सकते हैं और सहयोग को सुगम बना सकते हैं (जैसा कि कोहेन ने आफ्टर हेजेमनी में तर्क दिया है)। संस्थान अपना स्वयं का जीवन प्राप्त करते हैं और लाभ प्रदान करना जारी रखते हैं, जिससे सहयोग आत्म-टिकाऊ हो जाता है। यह यथार्थवादी एचएसटी के विपरीत है, जो आधिपत्य के पतन पर प्रणालीगत अस्थिरता की भविष्यवाणी करता है।

आलोचना: यथार्थवादियों और मार्क्सवादियों द्वारा।

नव-उदार संस्थावाद को विभिन्न सैद्धांतिक दृष्टिकोणों से महत्वपूर्ण आलोचनाओं का सामना करना पड़ता है:

- यथार्थवादियों द्वारा:
    - सतही सहयोग: यथार्थवादी तर्क देते हैं कि नव-उदारवादी सहयोग सतही और नाजुक है। वे मानते हैं कि राज्य तभी सहयोग करेंगे जब यह उनके तत्काल राष्ट्रीय हित को पूरा करेगा और जब शक्ति गणना तय करेगी तो वे दल-बदल करेंगे। संस्थान केवल अंतर्निहित शक्ति वितरण के प्रतिबिंब हैं, स्वतंत्र बल नहीं।
    - सापेक्ष लाभ की समस्या: यथार्थवादी लगातार "सापेक्ष लाभ की समस्या" की ओर इशारा करते हैं, यह दावा करते हुए कि राज्य मौलिक रूप से इस बात से चिंतित हैं कि वे प्रतिद्वंद्वियों की सापेक्ष कितनी शक्ति प्राप्त करते हैं, न कि केवल निरपेक्ष लाभ। यह अंतर्निहित चिंता एक अराजक दुनिया में सहयोग की गहराई और स्थायित्व को सीमित करती है।

    - अराजकता सर्वोपरि रहती है: यथार्थवादियों के लिए, अराजकता की मूलभूत स्थिति का मतलब है कि सुरक्षा चिंताएं हमेशा सहयोग पर हावी रहेंगी। संस्थान अंतर्राष्ट्रीय प्रणाली के आत्म-सहायता प्रकृति को मौलिक रूप से नहीं बदल सकते।
- मार्क्सवादियों/क्रिटिकल सिद्धांतकारों द्वारा:
    - शक्ति विषमताओं की अनदेखी: मार्क्सवादी और महत्वपूर्ण सिद्धांतकार नव-उदारवाद की आलोचना करते हैं कि यह अंतर्राष्ट्रीय प्रणाली में गहरी निहित शक्ति विषमताओं और असमानताओं को पर्याप्त रूप से संबोधित करने में विफल रहता है। वे तर्क देते हैं कि संस्थान सहयोग के तटस्थ सुविधाकर्ता नहीं हैं, बल्कि शक्तिशाली राज्यों या पूंजीवादी वर्गों के हितों की पूर्ति करते हैं, जिससे वैश्विक पदानुक्रम स्थायी होते हैं।
    - परिवर्तनकारी क्षमता का अभाव: वे नव-उदारवाद को एक यथास्थिति सिद्धांत के रूप में देखते हैं जो वैश्विक पूंजीवाद या शक्ति की मूलभूत संरचनाओं को चुनौती नहीं देता है। यह मौजूदा प्रणाली को बदलने के बजाय उसमें सुधार पर केंद्रित है।
    - आर्थिक नियतिवाद (कुछ मार्क्सवादी दृष्टिकोणों से): कुछ मार्क्सवादी यह तर्क दे सकते हैं कि नव-उदारवाद (और उदारवाद सामान्य रूप से) आर्थिक अंतर-निर्भरता पर बहुत अधिक जोर देता है, जबकि इस बात को नजरअंदाज करता है कि आर्थिक संरचनाएं स्वयं शक्ति संबंधों के उत्पाद हैं और शोषण में योगदान करती हैं।

6. मार्क्सवादी और संरचनात्मक दृष्टिकोण (Marxist and Structural Approaches)

अंतर्राष्ट्रीय संबंधों के मार्क्सवादी और संरचनात्मक दृष्टिकोण मुख्यधारा (यथार्थवादी और उदारवादी) सिद्धांतों के लिए एक महत्वपूर्ण विकल्प प्रदान करते हैं। वे मूल रूप से राज्यों और संस्थानों से ध्यान हटाकर वैश्विक आर्थिक संरचनाओं, ऐतिहासिक शक्तियों और वर्ग संघर्ष में निहित शक्ति संबंधों पर केंद्रित होते हैं। ये दृष्टिकोण अंतर्राष्ट्रीय संबंधों को राज्यों के बीच राजनीतिक शक्ति के संघर्ष के रूप में नहीं, बल्कि एक वैश्विक पूंजीवादी प्रणाली के भीतर आर्थिक प्रभुत्व और शोषण के संघर्ष के रूप में देखते हैं।

मुख्य सिद्धांत:

मार्क्सवादी और संरचनात्मक दृष्टिकोण कई मुख्य सिद्धांतों से एकजुट हैं जो राज्य-केंद्रित सिद्धांतों से काफी भिन्न हैं:

- वैश्विक पूंजीवादी प्रणाली, ऐतिहासिक भौतिकवाद और वर्ग संघर्ष पर ध्यान केंद्रित:
    - वैश्विक पूंजीवादी प्रणाली (Global Capitalist System): ये दृष्टिकोण दुनिया को मूल रूप से एक वैश्विक पूंजीवादी प्रणाली द्वारा आकार में देखते हैं, जो पूंजी के संचय (accumulation) और लाभ की खोज से प्रेरित है। अंतर्राष्ट्रीय संबंधों को इस आर्थिक प्रणाली के प्रतिबिंब (reflection) के रूप में समझा जाता है।
    - ऐतिहासिक भौतिकवाद (Historical Materialism): कार्ल मार्क्स से प्रेरणा लेते हुए, यह सिद्धांत यह मानता है कि ऐतिहासिक विकास मुख्य रूप से भौतिक (आर्थिक) परिस्थितियों और उत्पादन के साधनों (means of production) पर सामाजिक वर्गों के बीच संघर्ष से प्रेरित होता है। अंतर्राष्ट्रीय संबंधों में, इसका अर्थ यह विश्लेषण करना है कि आर्थिक संरचनाएँ (जैसे पूंजीवाद) अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर राजनीतिक परिणामों और शक्ति गतिशीलता (power dynamics) को कैसे निर्धारित करती हैं।
    - वर्ग संघर्ष (Class Struggle): जबकि पारंपरिक अंतर्राष्ट्रीय संबंध राज्यों पर केंद्रित होते हैं, मार्क्सवादी दृष्टिकोण विभिन्न सामाजिक वर्गों, विशेष रूप से पूंजीपति वर्ग (bourgeoisie) (पूंजीवादी वर्ग जो उत्पादन के साधनों का मालिक है) और सर्वहारा वर्ग (proletariat) (श्रमिक वर्ग) के बीच चल रहे संघर्ष पर जोर देते हैं, जो राज्यों के भीतर और across राज्यों में केंद्रीय गतिशीलता (central dynamic) है। यह संघर्ष अंतर्राष्ट्रीय क्षेत्र तक फैला हुआ है, जहाँ प्रभावी पूंजीवादी राज्य (और उनके संबंधित वर्ग) कमजोर राज्यों और उनकी आबादी का शोषण (exploit) करते हैं।
- अंतर्राष्ट्रीय प्रणाली पदानुक्रमित (hierarchical) है (मूल, परिधि, अर्ध-परिधि): अंतर्राष्ट्रीय अराजकता (anarchy) की यथार्थवादी धारणाओं या बढ़ती अंतर-निर्भरता और समानता के उदारवादी विचारों के विपरीत,

मार्क्सवादी दृष्टिकोण वैश्विक प्रणाली की अत्यधिक असमान और पदानुक्रमित प्रकृति पर जोर देते हैं। यह पदानुक्रम (hierarchy) इस प्रकार संरचित है:

  - मूल (Core): विकसित, औद्योगिक पूंजीवादी देश (जैसे पश्चिमी यूरोप, उत्तरी अमेरिका, जापान) जो वैश्विक अर्थव्यवस्था पर हावी हैं, पूंजी और प्रौद्योगिकी को नियंत्रित करते हैं, और परिधि (periphery) से कच्चे माल और सस्ते श्रम का निष्कर्षण (extract) करते हैं।
  - परिधि (Periphery): अविकसित (underdeveloped), आश्रित देश (जैसे ग्लोबल साउथ के कई देश) जो मूल राज्यों को कच्चे माल, सस्ते श्रम और बाजार प्रदान करते हैं। वे अक्सर आर्थिक अविकसितता, राजनीतिक अस्थिरता और मूल राज्यों पर निर्भरता से चिह्नित होते हैं।
  - अर्ध-परिधि (Semi-periphery): ऐसे राज्य जो मूल और परिधि दोनों की विशेषताएँ प्रदर्शित करते हैं, मध्यस्थ (intermediaries) के रूप में कार्य करते हैं। वे परिधीय राज्यों का शोषण कर सकते हैं जबकि मूल राज्यों द्वारा शोषित किए जा रहे हैं (जैसे ब्राजील, भारत, चीन उनके विकास के विभिन्न बिंदुओं पर)। यह अवधारणा वैश्विक असमानता की गतिशील और जटिल प्रकृति पर प्रकाश डालती है।
- आर्थिक शोषण अंतर्राष्ट्रीय संबंधों के लिए केंद्रीय है: मार्क्सवादी दृष्टिकोणों के लिए, अंतर्राष्ट्रीय संबंधों का सार केवल शक्ति संतुलन या सहयोग नहीं है, बल्कि मूल (core) द्वारा परिधि (periphery) का व्यवस्थित आर्थिक शोषण है। यह शोषण असमान विनिमय (unequal exchange) (जैसे परिधि से सस्ते कच्चे माल, मूल से महंगे निर्मित सामान), ऋण बंधन (debt bondage), लाभ निकालने वाले विदेशी निवेश, और मूल के लिए फायदेमंद आर्थिक नीतियों के थोपने के माध्यम से होता है।

प्रमुख विचारक:

- इमैनुएल वालरस्टीन (Immanuel Wallerstein) (1930-2019): विश्व-प्रणाली सिद्धांत (World-Systems Theory) विकसित किया, यह तर्क देते हुए कि आधुनिक दुनिया 16वीं शताब्दी से एक पूंजीवादी विश्व-अर्थव्यवस्था के रूप में संरचित है, जिसकी विशेषता मूल-परिधि-अर्ध-परिधि पदानुक्रम है। उन्होंने इस बात पर जोर दिया कि यह प्रणाली विश्लेषण की एक इकाई है, और ऐतिहासिक विकास को केवल इसकी वैश्विक गतिशीलता (global dynamics) की जांच करके समझा जा सकता है।
- आंद्रे गुंडर फ्रैंक (Andre Gunder Frank) (1929-2005): निर्भरता सिद्धांत (Dependency Theory) में एक प्रमुख व्यक्ति। फ्रैंक ने तर्क दिया कि ग्लोबल साउथ का अविकसित होना आंतरिक कमियों का परिणाम नहीं था, बल्कि विकसित "मूल" देशों के अधीन स्थिति में वैश्विक पूंजीवादी प्रणाली में इसके ऐतिहासिक एकीकरण के कारण सक्रिय रूप से हुआ था। उन्होंने प्रसिद्ध रूप से "अविकसितता के विकास" के लिए तर्क दिया।
- समीर अमीन (Samir Amin) (1931-2018): मिस्र के मार्क्सवादी अर्थशास्त्री, निर्भरता सिद्धांत और "असमान विनिमय" की अवधारणा में भी एक प्रमुख योगदानकर्ता। अमीन ने तर्क दिया कि वैश्विक पूंजीवादी प्रणाली स्वाभाविक रूप से परिधि में अविकसितता को बनाने और बनाए रखने के लिए डिज़ाइन की गई है, दक्षिण से उत्तर में मूल्य के हस्तांतरण के माध्यम से।
- एंटोनियो ग्राम्शी (Antonio Gramsci) (1891-1937): इतालवी मार्क्सवादी दार्शनिक, जिनकी आधिपत्य (hegemony) की अवधारणा महत्वपूर्ण अंतर्राष्ट्रीय संबंध सिद्धांत में अत्यधिक प्रभावशाली रही है, विशेष रूप से नव-ग्राम्शियानिज़्म (जैसे रॉबर्ट कॉक्स) में। ग्राम्शी ने शक्ति की अवधारणा को बल से परे बौद्धिक और नैतिक नेतृत्व को शामिल करने के लिए व्यापक किया, जहाँ प्रभावी वर्ग केवल बल के माध्यम से नहीं, बल्कि समाज के विचारों, मूल्यों और मानदंडों ("सामान्य ज्ञान") को आकार देकर अपने शासन को बनाए रखता है, इस प्रकार सहमति प्राप्त करता है। अंतर्राष्ट्रीय संबंधों में, इसका तात्पर्य है कि शक्तिशाली राज्य केवल सैन्य शक्ति के माध्यम से नहीं, बल्कि वैश्विक मानदंडों, संस्थानों और विचारधाराओं (जैसे नव-उदारवाद, मुक्त बाजार विचार) को आकार देकर अपना प्रभुत्व बनाए रखते हैं जो उन्हें लाभान्वित करते हैं।
- रॉबर्ट कॉक्स (Robert Cox) (1926-2018): अंतर्राष्ट्रीय संबंध के एक प्रमुख नव-ग्राम्शियाई विद्वान। कॉक्स ने प्रसिद्ध रूप से कहा, "सिद्धांत हमेशा किसी के लिए और किसी उद्देश्य के लिए होता है।" उन्होंने तर्क दिया कि मुख्यधारा के अंतर्राष्ट्रीय संबंध सिद्धांत (यथार्थवाद, उदारवाद) मौजूदा विश्व व्यवस्था को वैध बनाने का काम करते हैं। उन्होंने एक "महत्वपूर्ण सिद्धांत" के महत्व पर जोर दिया जो दुनिया को समझने और बदलने का प्रयास

करता है, विचारों, भौतिक क्षमताओं और संस्थानों के परस्पर क्रिया पर ध्यान केंद्रित करता है, और कैसे प्रभावी "ऐतिहासिक गुट" अपना आधिपत्य बनाए रखते हैं।

सिद्धांत / उप-विषय:

- निर्भरता सिद्धांत (Dependency Theory):
  - अवधारणात्मक समझ: 1950 के दशक-1970 के दशक में, मुख्य रूप से लैटिन अमेरिकी विद्वानों द्वारा, परिधीय देशों के लगातार अविकसित होने की व्याख्या करने के लिए विकसित एक सिद्धांत। यह तर्क देता है कि कम विकसित देशों का पूंजीवादी विश्व प्रणाली में एकीकरण उनके विकास के बजाय विकसित देशों पर उनकी निर्भरता और शोषण की ओर ले जाता है। मूल (core) परिधि (periphery) के संसाधनों, श्रम और बाजारों से लाभ उठाता है, जिससे परिधि अविकसितता के चक्र में फंस जाती है।
  - ऐतिहासिक संदर्भ: आधुनिकीकरण सिद्धांत की आलोचनाओं से विकसित हुआ, जिसने सुझाव दिया कि अविकसित देशों को केवल विकसित लोगों के मार्ग का पालन करने की आवश्यकता है। निर्भरता सिद्धांतकारों ने तर्क दिया कि इस मार्ग को मौजूदा वैश्विक आर्थिक संरचनाओं द्वारा अवरुद्ध किया गया था।
  - उदाहरण: औपनिवेशिक विरासत (Colonial legacies), जहाँ पूर्व उपनिवेश व्यापार और निवेश के लिए अपने पूर्व औपनिवेशिक आकाओं पर निर्भर रहते हैं, जिससे निरंतर आर्थिक निर्भरता बनी रहती है।
- विश्व-प्रणाली सिद्धांत (World-Systems Theory):
  - अवधारणात्मक समझ: इमैनुएल वालरस्टीन द्वारा विकसित, यह दुनिया को एक एकल, अंतर-निर्भर पूंजीवादी प्रणाली के रूप में देखता है जो एक मूल (core), परिधि (periphery), और अर्ध-परिधि (semi-periphery) में विभाजित है। महत्वपूर्ण बात यह है कि प्रणाली स्वयं विश्लेषण की इकाई है, न कि व्यक्तिगत राज्य। यह इस प्रणाली के ऐतिहासिक विकास पर जोर देता है और कैसे विभिन्न क्षेत्र श्रम के वैश्विक विभाजन में विशिष्ट भूमिका निभाते हैं, असमानता को स्थायी बनाते हैं।
  - निर्भरता से अंतर: संबंधित होने के बावजूद, विश्व-प्रणाली सिद्धांत एक अधिक व्यापक ऐतिहासिक और प्रणालीगत विश्लेषण प्रदान करता है, निर्भरता को एक बड़ी पूंजीवादी विश्व-अर्थव्यवस्था की विशेषता के रूप में देखता है, न कि केवल एक द्विपक्षीय संबंध के रूप में।
- ग्राम्शियानिज़्म (नव-ग्राम्शियानिज़्म): आधिपत्य, नागरिक समाज (Gramscianism (Neo-Gramscianism): Hegemony, civil society)।
  - अवधारणात्मक समझ: एंटोनियो ग्राम्शी की अवधारणाओं को अंतर्राष्ट्रीय संबंधों पर लागू करता है, विशेष रूप से उनके आधिपत्य के विचार को। अंतर्राष्ट्रीय संबंधों में, आधिपत्यवादी शक्तियाँ (या वर्ग) केवल सैन्य या आर्थिक दबाव के माध्यम से नहीं, बल्कि अंतर्राष्ट्रीय मानदंडों, संस्थानों और प्रचलित विचारों (जैसे मुक्त बाजार, लोकतंत्र) को आकार देकर अपना प्रभुत्व बनाए रखते हैं, जिससे उनका प्रभुत्व वैध और स्वाभाविक प्रतीत होता है, यहां तक कि उन लोगों के लिए भी जिन पर वे हावी होते हैं। इसमें "वैश्विक नागरिक समाज" (अंतर्राष्ट्रीय सामाजिक शक्तियां, एनजीओ, बौद्धिक आंदोलन) को प्रभावित करना शामिल है।
  - रॉबर्ट कॉक्स का योगदान: रॉबर्ट कॉक्स ने विश्व व्यवस्थाओं के ऐतिहासिक विकास का विश्लेषण करने के लिए ग्राम्शी की अवधारणा का विस्तार किया, यह दिखाते हुए कि कैसे प्रभावी शक्तियां "ऐतिहासिक गुट" बनाती और बनाए रखती हैं जो राज्य शक्ति, उत्पादन संबंधों और विचारों को एक विशेष वैश्विक व्यवस्था (जैसे, द्वितीय विश्व युद्ध के बाद का पैक्स अमेरिकाना एक अमेरिकी नेतृत्व वाली उदारवादी आधिपत्यवादी व्यवस्था के रूप में देखा गया था) को बनाए रखने के लिए संरेखित करते हैं।
  - प्रासंगिकता: यह समझाने में मदद करता है कि कैसे कुछ विचार और संस्थाएँ विश्व स्तर पर प्रभावी हो जाती हैं और बिना किसी स्पष्ट दबाव के भी परिवर्तन का विरोध करती हैं।
- संरचनात्मक मार्क्सवाद: वर्ग, साम्राज्यवाद, मूल-परिधि संबंध (Structural Marxism: Class, imperialism, core-periphery relations)।
  - अवधारणात्मक समझ: एक व्यापक श्रेणी जिसमें ऐसे दृष्टिकोण शामिल हैं जो अंतर्राष्ट्रीय संबंधों को आकार देने में वैश्विक पूंजीवाद की संरचनात्मक विशेषताओं पर जोर देते हैं। यह इन पर केंद्रित है:

        - वर्ग (Class): पूंजीवादी और श्रम वर्गों के बीच वैश्विक वर्ग संघर्ष, जो राष्ट्रीय सीमाओं को पार करता है।
        - साम्राज्यवाद (Imperialism): पूंजीवाद का उच्चतम चरण, जहाँ उन्नत पूंजीवादी राज्य बाजारों, संसाधनों और निवेश के अवसरों को सुरक्षित करने के लिए विभिन्न माध्यमों (आर्थिक, राजनीतिक, सैन्य) से कमजोर राज्यों को नियंत्रित और उनका शोषण करना चाहते हैं। लेनिन का साम्राज्यवाद का सिद्धांत यहाँ मूलभूत है।
        - मूल-परिधि संबंध (Core-Periphery Relations): जैसा कि चर्चा की गई है, प्रभावी पूंजीवादी केंद्रों और आश्रित अविकसित क्षेत्रों के बीच अंतर्निहित असमानता और शोषणकारी संबंध।
    - अन्य मार्क्सवादों से अंतर: जबकि सभी मार्क्सवादी दृष्टिकोणों की जड़ें समान हैं, संरचनात्मक मार्क्सवाद विशेष रूप से पूंजीवाद की प्रणालीगत और संरचनात्मक शक्तियों पर प्रकाश डालता है, व्यक्तिगत अभिनेताओं या साधारण राज्य-से-राज्य बातचीत के बजाय, अंतर्राष्ट्रीय राजनीति के प्राथमिक चालकों के रूप में।

आलोचना**:** नियतिवाद**,** आर्थिक न्यूनीकरणवाद **(Critique: Determinism, economic reductionism)**।

मार्क्सवादी और संरचनात्मक दृष्टिकोण, जबकि मुख्यधारा के अंतर्राष्ट्रीय संबंधों की शक्तिशाली आलोचनाएँ प्रस्तुत करते हैं, उन्हें महत्वपूर्ण आलोचनाओं का भी सामना करना पड़ा है:

- नियतिवाद (Determinism): आलोचकों का तर्क है कि ये दृष्टिकोण अत्यधिक नियतिवादी हो सकते हैं, यह सुझाव देते हुए कि आर्थिक संरचनाएँ (पूंजीवाद) पूरी तरह से राजनीतिक और सामाजिक परिणामों को निर्धारित करती हैं, जिससे एजेंसी, पसंद, या राजनीतिक, सांस्कृतिक या वैचारिक कारकों के स्वतंत्र प्रभाव के लिए बहुत कम जगह बचती है। यह कुछ परिणामों की कथित अनिवार्यता की ओर ले जाता है।
- आर्थिक न्यूनीकरणवाद (Economic Reductionism): एक संबंधित आलोचना यह है कि वे सभी अंतर्राष्ट्रीय घटनाओं को आर्थिक स्पष्टीकरणों तक सीमित कर देते हैं, शक्ति की राजनीति (जैसा कि यथार्थवादियों द्वारा जोर दिया गया है), विचारों और पहचान (जैसा कि रचनावादियों द्वारा जोर दिया गया है), या अंतर्राष्ट्रीय कानून और संस्थानों की भूमिका (जैसा कि उदारवादियों द्वारा जोर दिया गया है) के स्वतंत्र महत्व को नजरअंदाज करते हुए। यह सरलीकरण कभी-कभी अंतर्राष्ट्रीय घटनाओं की जटिलता और बहु-कारणता (multi-causality) को ध्यान में रखने में विफल हो सकता है।
- नीतिगत मार्गदर्शन का अभाव (Lack of Policy Guidance): कुछ का तर्क है कि जबकि ये सिद्धांत समस्याओं (शोषण, असमानता) का निदान करने में मजबूत हैं, वे एक अधिक न्यायपूर्ण और न्यायसंगत दुनिया को कैसे प्राप्त करें, विशेष रूप से मौजूदा प्रणाली के भीतर, इसके लिए कम स्पष्ट नीतिगत नुस्खे प्रदान करते हैं।
- राज्यों का अतिसरलीकरण (Oversimplification of States): जबकि राज्य-केंद्रित दृष्टिकोण की आलोचना करते हुए, कुछ का तर्क है कि ये दृष्टिकोण राज्यों की आंतरिक गतिशीलता और विविधता को अतिसरल कर सकते हैं, उन्हें पूंजीवादी वर्गों के मात्र उपकरणों तक सीमित कर सकते हैं।